होशंगाबाद विज्ञान

मैं गुरूजी कैसे बना 1
बच्चे पढ़ क्यों नहीं पाते 3
सवालीराम 9
प्रश्न पत्र 13
मूल्यांकन समीक्षा 15
मां बाप के प्रति कर्तव्य 19
विज्ञान क्या है? 25
हरसूद 34
पुस्तक समीक्षा 36

अंक 30 शिक्षा व शिक्षकों से संबंधित पत्रिका फरवरी 90

संपादन □ राजेश रिवन्दरी
राग
हृदयकांत दीवान
सहयोग □ ब्रजेशासिंह
इंदु नायर
जया विवेक
चित्रांकन □ राजेश यादव
कमलेश
वितरण □ महेश शर्मा

होशंगाबाद विज्ञान, होशंगाबाद और विज्ञान पढ़ाने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि शिक्षा में नए सोच और नवाचार का प्रतीक है!

एकलव्य, कोठीबाजार, होशंगाबाद 461 001

प्रिय मित्र,

होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका शिक्षकों व शिक्षा में रूचि रखनें वालों की पत्रिका है। पत्रिका के माध्यम से एकलव्य के विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों व अन्य गतिविधियों की भी जानकारी पाठकों को मिलती है। दरअसल कोशिश यह है कि होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका सिर्फ शिक्षा व शिक्षकों तक ही सीमित न रहे, बल्कि शिक्षा के व्यापक अर्थों की प्रस्तुति और वर्तमान सामाजिक संदर्भों में शिक्षा की स्थिति पर सवाल उठा सकने वाला एक मंच भी बन सके।

एक लंबे अर्से के बाद पुनः यह आग्रह है कि पत्रिका के स्वरूप पर अपनी राय के साथ-साथ लेख, कविता, कहानी व अन्य सामग्री भी भेजें। अपने परिचितों को भी इसके लिए कहें।

आप वार्षिक सदस्य हैं, पिछले सभी अंक आपको मिले ही होंगे। यदि कोई अंक न मिला हो तो कृपया सूचित करें। हां, यदि आपके डाक पते में कोई फेरबदल हुआ हो तो भी लिखें। बेहतर होगा, यदि संभव हो तो, पत्रिका की प्राप्ति की सूचना आप हमें हर बार दे सकें।

होशंगाबाद विज्ञान पत्रिका का आपका सदस्यता शुल्क समाप्त हो गया है। कृपया अगले दस अंकों के लिए रूपए 20=00 (डाकखर्च सहित) मनीआर्डर द्वारा निम्न पते पर भेजें-

महेश शर्मा
एकलव्य, कोठीबाजार, होशंगाबाद
461 001

आपका
Mahesh Sharma
महेश शर्मा

मैं गुरूजी कैसे बना!

मेरा जन्म एक निर्धन आदिवासी परिवार में गांधी जयंती के दिन सन् 1950 को पीपल्या ग्राम में हुआ था। जब मैं 6 वर्ष का हो गया तो मैं स्कूल आने जाने वाले साथियों को देखता। वे कई तरह की आवाज़ें निकालते हुए जाते थे। मैं उन्हें बड़े ध्यान से काफी समय तक देखता रहता - जब तक वे मेरी आंखों से ओझल नहीं हो जाते थे। फिर मेरे मन में भी उथल-पुथल मच जाती कि 'तू भी स्कूल जा, कितना मजा आता है।'

परन्तु हमारे परिवार की हालत कमजोर थी। हमारे यहां 16 बीघा जमीन थी, परन्तु हम पटेल के कर्ज़ में डूबे थे। दादा को पटेल के ही खेत में मज़दूरी करनी पड़ती थी। हम सात भाई-बहन थे। मेरे से दो बड़े भाई स्कूल जाते थे, मेरी पढ़ाई का खर्च पिताजी नहीं दे सकते थे।

मेरे गांव में हनुमान के मंदिर के सामने शाला लगती थी। मेरी जिम्मेदारी थी ज्वार की फसल से तोते

उड़ाना। मुझे पढ़ने का बहुत शौक था। जब दादा चले जाते तो मैं खेत का एक चक्कर लगा कर मंदिर के पास आकर बैठ जाता। मंदिर से शाला के शिक्षक व श्यामपट साफ दिखते थे। मेरे पास पट्टी का एक छोटा टुकड़ा था। मैं उस पर लिखते और शिक्षक को सुनते, लिखना-पढ़ना सीखने लगा। शाला छूटने के बाद मैं अपनी पट्टी को छुपा देता कि कहीं दादा को पता न चल जाये। वे पुलिस में रह चुके थे। उन्हें मालूम पड़ता तो वे मेरी अच्छी धुनाई कर देते।

एक दिन वे मुझे ढूंढते हुए खेत में पहुंचे और फिर स्कूल के पास। स्कूल के बच्चों ने बताया कि मैं वहां रोज आता हूं। अगले दिन उन्होंने मेरा नाम स्कूल में लिखवा दिया। मेरे गुरू मेरे से बहुत खुश होते।

चौथी के बाद हमें काम के लिए दूसरे गांव जाना पड़ा। वहां स्कूल नहीं था। पास के गांव में पांचवीं कक्षा लगती थी। मेरे साथ दो सम्पन्न परिवार के बच्चे आते जाते। मैं उन्हें पढ़ाता भी। मेरे से खुश होकर उनके माता पिता ने मुझे कपड़े सिलवा दिये। उनको पढ़ाने से मेरी पढ़ाई भी अच्छी हो गई।

माध्यमिक शाला तो और भी दूर थी। मुझे स्कूल से उठवा दिया। दादा ने मेरे लिए काम ढूंढ लिया, मैंने डर से ही हां कर दी थी। अगले दिन मुझे ढोर चराने जाना था।

रात को मैंने एक पोटली में अपना ट्रांसफर सर्टिफिकेट और एक दो कपड़े नदी के पास एक पेड़ में छुपा दिये। जब सुबह हुई तो मैं टट्टी जाने के बहाने घर से निकला और मकड़ाई गांव पहुंच गया।

रोते-रोते वहां एक गुरूजी से अपनी कहानी सुनाई। उन्होंने मेरा नाम वहां लिखवा दिया। वहां होस्टल में रहा। मेरे दादा ने मुझे बहुत ढूंढा पर मैं मिला नहीं। एक साल बाद किसी पहचान वाले ने मुझे देख लिया। उन्होंने दादा को बता दिया। तब से दादा मुझे कुछ पैसे भेजने लगे।

आठवीं करके घर लौटा। दादा ने साफ कह दिया कि वह अब मेरी पढ़ाई का खर्च नहीं उठा सकते। वह दिन मुझे अभी भी याद है। दिन भर जंगल में जाकर मैं खूब रोया। कुछ खाया पिया नहीं, मैंने निश्चय कर लिया कि मैं पढूंगा। गर्मियों के दो महीने मैंने तेंदू पत्ता तोड़ा। एक-एक दो-दो रूपये में लोगों के खेतों में गोबर फैंका और तीन-चार सौ रुपये जमा कर लिये। मैंने हिसाब लगाया कि खाने-पीने, कपड़े और किताबों का खर्च इतने पैसों में पूरा हो जायेगा।

पहली जुलाई को घर से निकला और स्कूल में अपना नाम लिखवा आया। ग्यारहवीं पास करके मैं अपना नाम कॉलेज में लिखवाना चाहता था, परंतु पिताजी की बीमारी ने आगे पढ़ने से रोक दिया। मुझे नौकरी करने की बात सोचनी पड़ी, पर मन ही मन काफी पछताता रहा कि आगे और पढ़ता तो कितना और कितना ......।

मेरी वन विभाग में केदझीरी गांव में वन रक्षक के पद पर नौकरी लगी। एक दिन चड्डी पहने मैं बांस कें कूप में काम कर रहा था कि वन विभाग के अधिकारी आ पहुंचे। उन्होंने बेवजह मुझे डांट-फटकार दिया। मुझे गुस्सा आया। एक तो हम दिन भर पहाड़ों के उबड़-खाबड़ स्थानों से लकड़ियों को कटवाने का काम करते और उस पर सिर्फ टोपी न पहनने पर इतनी डांट! मैंने कूप के रजिस्टर को उन के सामने फैंक दिया और नौकरी भी छोड़ दी।

इस बीच दादा की हालत बहुत बिगड़ गई। मैं तीन हजार का कर्ज़ लेकर दादा को इन्दौर ले गया। वहां

(शेष भाग पेज 8 पर)

बच्चे पढ़ क्यों नहीं पाते?

सुशील जोशी

आजकल बहुत सारे शिक्षक और पालक यह शिकायत करते मिलते हैं कि बच्चे पढ़ना तक नहीं जानते. *पांचवीं पास करके आ गए पर पढ़ तक नहीं सकते.* यह बात बहुत सुनने को मिलती है. और फिर आदतन, पुराना ज़माना या *हमारा ज़माना* याद आ जाता है. उस समय कैसे पहली क्लास के बच्चे पता नहीं क्या-क्या कर लेते थे! आख़िर पढ़ना अचानक इतना दुर्गम हुनर कैसे हो गया?

चूंकि बात पढ़ने की चली है तो पहले पाठकों की जांच हो जाए. कागज़ कलम लेकर तैयार हो जाइए. नीचे कुछ अक्षर लिखे हैं, इन्हें ध्यान से देख लीजिए. अब इन्हें एक तरफ करके याददाश्त के आधार पर लिख डालिए कि कौन-कौन से अक्षर देखे थे

ल ए फू जो क की म
च ल क है ड़ में ता खि है ल

अब जांच कीजिए कि आप कितने अक्षर लिख पाए. एक बार फिर करके देखें. नीचे कुछ अक्षर लिखे हैं. इनके साथ ऊपर वाली क्रिया दोहराइए

क म ल ए क फू ल
है जो की च ड़ में खि ल ता है

कौन सा वाला ज़्यादा आसान रहा? परंतु यदि आप ध्यान से देखें तो दोनों बार अक्षर वही थे. फिर क्या अंतर पड़ा?

इसी तरह के कई प्रयोगों के माध्यम से भाषा वैज्ञानिक यह समझने का प्रयास करते हैं कि आख़िर पढ़ने की क्रिया होती कैसे है. इसी समझ के आधार पर पढ़ना सिखाने के तौर-तरीके बनाए जा सकते हैं.

बहरहाल ज़रा देखें कि आज हमारे स्कूलों में जिस तरीके से पढ़ना सिखाया जाता है उसके मूल सिद्धांत क्या हैं.

सबसे पहला काम यह किया जाता है बच्चे वर्णमाला के सारे अक्षर पहचानने लगें. उसके बाद इन अक्षरों को जोड़कर आसान शब्द बनाए जाते हैं. आसान शब्द से मतलब है वे शब्द जिनमें मात्रा का उपयोग न हुआ हो. मात्राविहीन शब्दों के चक्कर में कई बेमतलब शब्दों भी बन जाते हैं. इन शब्दों को मिलाकर *अमर घर चल., जल घर पर रख,* आदि जैसे वाक्य सिखाए जाते हैं. इसके बाद मुश्किल शब्द, संयुक्ताक्षर, मुश्किल शब्दों के वाक्य, व्याकरण सहित, आदि इसी क्रम में आते हैं.

इस कवायद में काफी समय तक विद्यार्थियों को उद्देश्य या प्रयोजन मालूम नहीं होता. वे तो बस *कोर्स* पूरा करने में जोत दिए जाते हैं. इनमें से किसी भी मुकाम पर अक्षर पहचान की गलती को दंडित किया जाता है, परीक्षा में अंक भी काटे जाते हैं. इसका अर्थ यह हुआ कि पढ़ने की पूरी क्रिया में अक्षर पहचान को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है. इसके पीछे मान्यता यह है कि लिखित भाषा अक्षरों का समूह है जिसमें प्रत्येक अक्षर एक ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता है.

एक दर्जन आसान तरीके अपनाइए और पढ़ना मुश्किल बनाइए

1. पढ़ने के नियम यथा शीघ्र सिखाएं - ताकि पढ़ने का मूल उद्देश्य गुम हो जाए.
2. उच्चारण सीखने पर ज़ोर दें - ताकि बच्चे अर्थ न समझ सकें.
3. एक बार में एक अक्षर या शब्द सिखाएं और इसे पूरी तरह सिखाकर ही आगे बढ़ें - ताकि संदर्भ स्पष्ट न हो और मज़ा न आए.
4. सही शब्द को पढ़ने का प्रमुख उद्देश्य बनाएं - ताकि अर्थ पर ध्यान न जाए.
5. अनुमान को निरुत्साहित करें - ताकि बच्चे हमेशा हिज्जे करके पढ़ते रहें.
6. सटीकता पर ज़ोर दें - ताकि पढ़ना उबाऊ हो जाए.
7. तुरंत टीका-टिप्पणी करें - ताकि बच्चा अपनी गलतियों को खुद न सुधारे.
8. आंखों की गति यदि गलत हो, तो पकड़ें और ठीक करें - ताकि पढ़ना मात्र अक्षरों को पहचानना बन जाए.
9. समस्याग्रस्त विद्यार्थियों को यथाशीघ्र पहचानकर उनपर खास ध्यान दें - ताकि वे अपनी गलतियों से न सीख सकें और कक्षा में मखौल हो.
10. बच्चों को पढ़ने का महत्व अवश्य समझाएं - जैसे कि पढ़कर पढ़ने का महत्व मालूम नहीं होगा.
11. पढ़ते समय हिज्जे और सुलेख ज़रूर सुधरवाएं - ताकि बच्चे तकनीक में उलझे रहें.
12. और यदि आपकी विधि असंतोषजनक हो, तो कोई दूसरी तकनीक लागू करने में देर न करें - ताकि आप खुद भी तकनीक में उलझे रहें.

अक्षर को देखकर उससे जुड़ी ध्वनि का उच्चारण कर देना पढ़ना माना जाता है. यह बुनियादी गलतफहमी है. भाषा वैज्ञानिकों ने ऐसे कई प्रयोग किए हैं जिनसे पता चलता है कि सक्षम पाठक, दरअसल, अक्षर-दर-अक्षर नहीं चलते. इनमें से एक प्रयोग का हवाला लेख की शुरूआत में दिया गया है.ऐसे कई प्रयोगों के आधार पर कई भाषा वैज्ञानिकों का विचार है कि अक्षर पहचान और पढ़ने में ज़मीन आसमान का अंतर है.

दरअसल पढ़ने का मतलब अक्षरों से जुड़ी ध्वनियां पैदा करना न होकर लिखी हुई चीज़ का अर्थ निकालना है. पढ़ने को हम जब इस व्यापक अर्थ में लेते हैं तो स्पष्ट है कि कई विद्यार्थी, जो उच्चारण शायद कर भी लेते हों, सही अर्थों में पढ़ नहीं पाते. अक्सर हम कहते हैं कि अमुक बच्चा पढ़कर समझ नहीं पाता. इससे ऐसा लगता है कि पढ़ना और समझना दो अलग-अलग चीज़ें हैं जबकि पढ़ने की व्यापक परिभाषा में समझना तो पढ़ने का उद्देश्य ही है. इसलिए बिना समझे पढ़ना वास्तव में निरुद्देश्य ही कहा जाएगा.

दरअसल, यदि आम पाठक अक्षर-दर-अक्षर पढ़ें तो पढ़ने की गति बहुत कम होगी जबकि हम आमतौर पर काफी तेज़ गति से पढ़ते हैं. अंग्रेज़ी भाषा के लिए भाषा वैज्ञानिक पॉल ए. कोलर्स द्वारा की गई एक गणना के मुताबिक अक्षरवार पढ़ने पर अधिकतम 35 शब्द प्रति मिनट पढ़े जा सकते हैं जबकि आम अंग्रेज़ी पाठक 300 शब्द प्रति मिनट पढ़ता है. इससे स्पष्ट है कि पढ़ने का तरीका यह नहीं हो सकता. हिंदी भाषियों के मामले में, शायद इस तरह के प्रयोग नहीं हुए हैं.

पढ़ने के अक्षरवार सिद्धांत के हिमायती यह कहते हैं कि सक्षम पाठक अक्सर दो-तीन शब्द एक साथ देख लेते हैं और इस प्रकार से उनकी पढ़ने की गति काफी तेज़ हो जाती है. इस संबंध में एक दिलचस्प प्रयोग किया गया था. कॉलेज के कुछ विद्यार्थियों को दो शब्दों के अक्षर क्रमवार सिखाए गए. एक बार में दोनों शब्दों का एक-एक अक्षर दिखाया गया. मान लीजिए शब्द REVEA L और CANVAS हैं तो पहले R,C फिर E,A, V,N, E,V,A,A, और L,S दिखाए गए. जब अंत में उनसे इनमें एक ही शब्द बताने को कहा गया तो 57% सही उत्तर आए. परंतु जब दोनों शब्द बताने की बात आई तो सही उत्तर मात्र 0.2% रहा (420 में से 1 बार). इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि दो शब्द एक साथ देखकर समझ पाना असंभव है.

इस संदर्भ में एक और तथ्य महत्वपूर्ण है. पढ़ते समय हमारे दिमाग की लघु अवधि याददाश्त का उपयोग होता है. इसमें एक समय में अधिक-से-अधिक 4-5 असंबंधित चीज़ें संग्रह की जा सकती हैं. अब यदि हम अक्षरों को याद रखें तो जब तक शब्द पूरा होगा, तब तक शुरू का अक्षर भूल जाएंगे. इसी प्रकार से जब तक वाक्य पूरा होगा तब तक पहला शब्द भूल जाएंगे. और वास्तव में होता भी यही है. जो लोग हिज्जे कर कर, अक्षर जोड़-जोड़कर पढ़ते हैं वे अंत में कई बार मतलब नहीं समझ पाते.

दूसरी बात यह है कि ये लोग अपने दिमाग पर अनावश्यक अतिरिक्त दबाव डालते हैं. हर लिखित अक्षर हमारी आंखों को एक प्रकाश संकेत भेजता है. आंखों के ज़रिए यह संकेत दिमाग में पहुंचता है. दिमाग़ में इसे प्रोसेस करके समझा जाता है. यह तो कोई भी मानेगा कि अ का संकेत मिलने से अनार नहीं समझा जा सकता. मतलब अक्षर से मिलने वाले संकेत में कोई अर्थ नहीं होता.

यही बात शब्द के बारे में भी कही जा सकती है. यदि देवनागिरी से अपरिचित किसी व्यक्ति को *अनार* शब्द दिखाया जाए या *अनार* से नावाकिफ़ व्यक्ति को यह शब्द दिखाया जाए, तो क्या इससे कोई मतलब निकलेगा? पहला व्यक्ति अनार तो जानता है पर यह वही लिखा है उसे क्या मालूम! दूसरा व्यक्ति अ - ना - र पढ़ तो लेगा पर इन सबसे उसे कोई अर्थ नहीं मिलेगा. फिर अर्थ आता कहां से है.

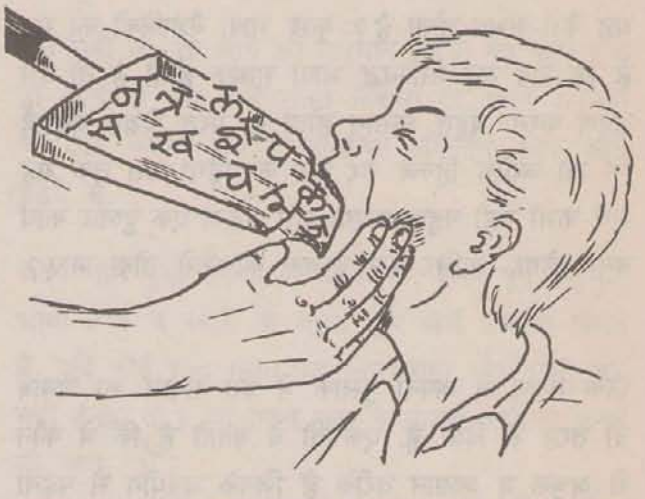

यह अर्थ हमारे अंदर होता है. जब कोई व्यक्ति कुछ लिखता है, तो उसके दिमाग में कोई अर्थ होता है, जिसे लिखित संकेतों में कागज़ पर उतारा जाता है. जब हम इन संकेतों को देखते हैं, तो अपने पूर्व अनुभवों, भाषा के ज्ञान व सामूहिक समझ के आधार पर अर्थ का पुनर्निर्माण करते हैं.

यदि कोई शब्द हमारे अनुभव के बाहर का होता है तो पहले तो संदर्भ के आधार पर समझने की कोशिश करते हैं. जब संदर्भ से अर्थ स्पष्ट नहीं होता, तो कहीं और से मदद लेते हैं. - किसी से पूछकर या शब्दकोष के ज़रिए.

परंतु यदि संकेतों की प्रोसेसिंग अक्षरवार नहीं होती तो फिर कैसे होती है? पिछले कुछ वर्षों में इस संबंध में हमारी समझ में काफी इज़ाफा हुआ है.

पहली बात तो यह स्पष्ट हुई है कि पढ़ते वक्त हम सारी चित्रित जानकारी का उपयोग नहीं करते. हम बहुत चुनावपसंदगी का परिचय देते हुए मात्र कुछ चुनिंदा संकेतों पर ध्यान देते हैं. जैसा कि हमने देखा कि अक्षरों के एक

विशेष क्रम (वाक्य) को पहचानना ज़्यादा आसान होता है बजाय बेतरतीब अक्षरों के. उसी प्रकार से यह भी प्रदर्शित किया जा सकता है कि शब्दों के विशेष क्रम (वाक्य) को पहचानना ज़्यादा आसान होगा बजाय बेतरतीब शब्दों के.

यह कैसे संभव होता है? कुछ भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि जब यह लिपिबद्ध भाषा सार्थक होती है तो इसे ग्रहण करना बहुत आसान होता है. परंतु दिक्कत यह है कि जो व्यक्ति हिज्जे कर कर के पढ़ेगा उस तक यह अर्थ कभी नहीं पहुंच पाएगा और पढ़ना एक दुष्कर कार्य बना रहेगा. आख़िर इस दुष्चक्र को कैसे तोड़ा जाए?

फ्रैंक स्मिथ ने अपनी पुस्तक में इस सवाल का जवाब दो तरह से दिया है. एक तो वे बताते हैं कि वे कौन से अचूक व आसान तरीके हैं जिनके उपयोग से पढ़ना सीखना लगभग असंभव हो जाएगा (देखें बॉक्स). दूसरा वे बताते हैं कि वह कौन सा मुश्किल तरीका है जिससे पढ़ना सीखना आसान हो सकता है. उनका एवं अन्य कई भाषा वैज्ञानिकों का मानना है कि पढ़ना सीखने का सर्वोत्तम तरीका पढ़ना ही है - पढ़कर ही पढ़ना

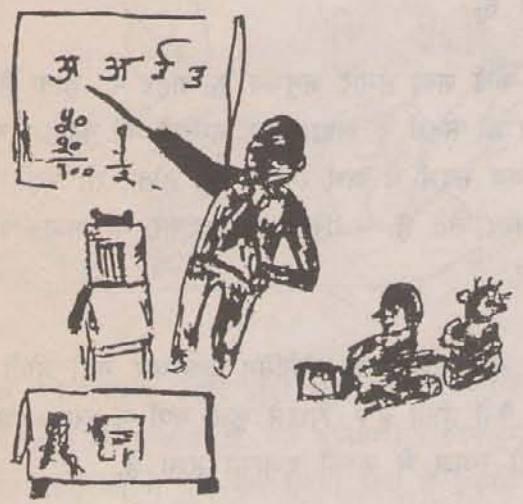

सीखा जा सकता है. सायकल और उसे चलाने के बारे में बारीक जानकारी हासिल करने का यह अर्थ नहीं कि उक्त व्यक्ति सायकल चला भी लेगा. सायकल चलाना तो केवल उसपर चढ़कर ही सीखा जा सकता है.

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री कृष्णकुमार ने इस संबंध में बहुत महत्वपूर्ण बात उठाई है - यदि एक बच्चे को पढ़ना शुरू करने से पहले या कोई रोचक कहानी पढ़ने से पहले, इतना सारा अर्थहीन, निरुद्देश्य परिश्रम करना पड़े, तो कोई अचरज नहीं कि अधिकांश धीरज खो बैठेंगे. उनका कहना है कि स्कूल छोड़ने के अन्य कारणों के साथ उबाऊ व निरर्थक कवायद भी एक कारण है.

फिर भी इस प्रश्न पर आते हैं कि आख़िर सक्षम पाठक इतनी तेज़ी से कैसे पढ़ते हैं? दरअसल समस्या यह है कि पढ़ने का काम इतनी तेज़ गति से और अचेतन रूप में होता है कि यह पक्की तौर पर बताना मुश्किल है कि इस दौरान क्या कुछ घट जाता है.

इसे जान पाने का एक ही तरीका बच जाता है - कि पाठकों को देखें व पता लगाएं कि वे किस तरह की गलतियां करते हैं और इन की व्याख्या से ही कुछ समझने की कोशिश करें.

वैसे एक और भी तरीका अपनाया गया है कि लिखित भाषा में कुछ इस तरह से बदलाव कर दिया जाए कि सक्षम पाठक को भी धीमा होना पड़े और इस स्थिति में उनका अध्ययन किया जाए. बच्चों द्वारा पढ़ते समय की गई गलतियों का भी काफी अध्ययन किया गया है.

मसलन पॉल कोलर्स ने अपने अध्ययन में अंग्रेज़ी भाषा में ही शब्दों को उल्टा लिखकर या हरेक अक्षर को सिर के बल लिखकर या वाक्य को उल्टा लिखकर प्रयोग किए. उन्होंने पाया कि जब कोई व्यक्ति किसी शब्द को गलत पढ़ता है तो उसकी जगह वह किसी अन्य शब्द का इस्तेमाल इस तरह करता है कि प्राय: संज्ञा की जगह संज्ञा, क्रिया की जगह क्रिया, ही रखता है. इससे

उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पढ़ते समय हम सिर्फ अक्षर नहीं देखते. क्योंकि यदि अक्षरों को देख-देखकर पढ़ने की बात होती तो ये व्यक्ति मूल शब्द के जैसा दिखने वाला दूसरा शब्द रख देते. कोलर्स का कहना है कि पढ़ते समय हम आने वाले शब्दों का अनुमान लगाते चलते हैं.

व्याकरण के अपने कामकाजी ज्ञान के आधार पर हम जानते हैं कि कहां संज्ञा की अपेक्षा करनी चाहिए और कहां क्रिया की. यदि हम संज्ञा को गलत पढ़ते हैं तो यह जानते हुए कि वाक्य में उस जगह संज्ञा आनी चाहिए, हम उसके स्थान पर किसी दूसरी *संज्ञा* का उपयोग कर देते हैं और आगे बढ़ जाते हैं.

इस तरह से अनुमान लगाते हुए चलने में हमें पूरी लिपि को ध्यान से नहीं देखना होता. फिर हमें पढ़ते हुए पूरी बात का संदर्भ मालूम होता है. हमें अंदाज़ होता है कि क्या-2 हो सकता है. इस प्रकार से व्याकरण की दृष्टि से और संदर्भ की दृष्टि से अगले शब्द या वाक्यांश को लेकर हमारी कुछ अपेक्षाएं होती हैं. इन अपेक्षाओं के आधार पर हम अटकल लगाते हैं. हिंदी भाषा में 2 लाख शब्द हो सकते हैं पर वहां उस स्थान पर इनमें से कोई भी शब्द अचानक नही टपक सकता.

इस तरह से हमारी अपेक्षा में जो दो-चार संभावनाएं होती हैं उनमें से हमें चुनाव करना होता है कि कौन सी सही है. इस चुनाव के लिए अक्षरवार देखने की ज़रूरत नहीं. आंशिक जानकारी मिलने से ही हम तय कर सकते हैं कि हमारा अनुमान सही था या गलत।

यदि सही था, तो आगे का अनुमान लगाने का काम शुरू हो जाता है और यदि गलत निकला तो अपने अनुमान को ठीक करके, अर्थ में यथोचित परिवर्तन करके आगे बढ़ते हैं.

अतः मात्र कुछ संकेतों के आधार पर अपने पूर्व अनुभव, भाषा ज्ञान व संदर्भ के तहत हम अर्थ समझते चलते हैं. यदि कोई शब्द गलत पढ़ लिया गया और इससे अर्थ नहीं बनता तो? या गलत शब्द के कारण अर्थ का अनर्थ हो जाए, तो?

पहली स्थिति में पाठक वाक्य या उस हिस्से का पुनरावलोकन करता है ताकि अर्थ ग्रहण कर सके. दूसरी स्थिति में पाठक आगे बढ़ जाता है. पर जब यह अनर्थ आगे की बातों से मेल नहीं खाता, तो उसे अपने आप समझ में आता है कि कुछ गलती हुई है.

उदाहरण के लिए यह वाक्य देखें

वह तेज़ धूप में भागता हुआ घर गया.

यदि कोई व्यक्ति गलती से इसे यों पढ़ दे

वह तेज़ धूप में भागता हुआ मर गया

तो उसके पास फिलहाल यह समझने का कोई तरीका नहीं है कि उसने गलती की है. पर अगला वाक्य

थोड़ी देर सुस्ताकर उसने एक गिलास ठंडा पानी पिया,

उसे बता देगा कि कहीं कुछ गलती हुई है, बशर्ते कि उसने पिछले वाक्य का अर्थ ग्रहण किया हो.

अर्थ समझने के उद्देश्य से पढ़ने का यह एक महत्वपूर्ण पहलू है कि इसमें खुद की गलतियां पकड़ने का तरीका या फीडबैक निहित है.

बच्चे भी इस तरीके का उपयोग करते हैं, बशर्ते कि उनको रोका न जाए. दरअसल जब अक्षर-दर-अक्षर पढ़ने को कहा जाता है, तो अर्थ पर से ज़ोर हट जाता है. बच्चे को अनुमान लगाने व अपने अनुमानों की सत्यता की जांच करने, उसे सुधारने की महत्वपूर्ण क्रियाओं से वंचित कर दिया जाता है.

बच्चे का सारा ध्यान अक्षरों के उच्चारण पर लगा रहता है. और पढ़ने की वास्तविक क्रिया टलती रहती है और कई मामलों में हमेशा के लिए टल जाती है.

इससे हम क्या सबक लें? पहला सबक तो यह है कि पहले दिन से ही पढ़ने की सामग्री सार्थक होना ज़रूरी है. और यह सार्थकता उस विद्यार्थी के संदर्भ में आंकी जानी चाहिए जो उक्त सामग्री का पाठक है.

इस संदर्भ में यह तथ्य महत्वपूर्ण हो जाता है कि जो सामग्री पढ़ने के लिए दी जा रही है वह किस भाषा में है. क्या बच्चे उस भाषा से परिचित हैं? या कहीं यह भाषा एकदम अपरिचित तो नहीं?

तीसरी बात यह है कि भाषा को एक समग्र रूप में देखने पर ही वह सार्थकता पाती है. उसे अक्षर, उच्चारण, व्याकरण आदि में बांट देने से यह सार्थकता नष्ट होती है. वास्तव में इन अलग-अलग चीज़ों का कोई क्रम भी नहीं है, जिसके अनुसार इनका *अध्ययन* किया जाए.

दरअसल भाषा का समग्र रूप तो उसके इस्तेमाल में उभरता है, चाहे वह लिखने में हो, बोलने में हो पढ़ने में. भाषा के अधिकाधिक उपयोग का अवसर बनाना ही एकमात्र रणनीति होगी.

(पेज 2 से आगे)

डाक्टर ने कहा 'तुम इन्हें घर ले जाओ, इनका इलाज यहां नहीं होगा।' मैंने मन में सोचा कि क्या मैं गरीब हूं इसीलिए डाक्टर इलाज करना नहीं चाहते। दादा को तीसरी स्टेज का कैंसर था, केवल 20 दिन के मेहमान थे। मैं उन्हें घर ले आया।

एक दिन जब मैं खेत से घर लौटा तो घर पर सब बहुत खुश थे, मैं उनकी खुशी का कारण समझ नहीं पा रहा था। दादा से हाल पूछने गया तो दादा ने कहा 'बेटा, तू तो मास्टर हो गया।' और आर्डर निकाल कर मुझे दिया। आर्डर को पढ़ कर मैं बहुत खुश हुआ।

तब से मैंने प्रण कर लिया कि मेरे जैसे गरीब बच्चों को अन्य लोगों की अपेक्षा अच्छे से अच्छा ज्ञान हो। तभी से आज तक बच्चों को पढ़ाई में जो भी कठिनाई होती है मैं उसे आतिरिक्त समय देकर भी दूर करता हूं।

मेरी कहानी से मिलता जुलता अब किसी बालक का जीवन देखता हूं तो मेरी आंखों में आंसू रोकते हुए भी छलक आते हैं।

श्यामलाल उइके
जनपद प्राथमिक शाला
देवतलाव (हरदा)

खत सवालीराम के

सवालीराम जी नमस्ते
इस विज्ञान को पढ़ने का हमारा यह आखिरी वर्ष है। मैं इस वर्ष भी आपसे कुछ सवाल करूंगा।
हमें यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि इस साल के प्रयोग सरल हैं व प्रयोग का सामान सस्ता है। लेकिन हर साल की तरह इस बार भी हमें परिभ्रमण पर नहीं ले जाया गया। मैंने आपसे छठवीं और सातवीं में पत्र लिखकर कहा था कि हमें परिभ्रमण पर नहीं ले जाया गया। इस बार आपसे कुछ प्रश्न हैं

(अ)छिपकली की पूंछ कटने के बाद भी क्यों हिलती है?
(ब)मरने के बाद भी आदमी के बाल क्यों बढ़ते हैं?

ये प्रश्न पाठ्य पुस्तक के नहीं है। लेकिन मेरा मतलब सजीव-निर्जीव से है। छिपकली की पूंछ कटने के बाद भी सजीव रहती है क्या? क्या उसमें आत्मा होती है, अगर छिपकली की पूंछ में आत्मा है तो छिपकली क्यों नहीं मरती?
मरने के बाद मनुष्य के अंग क्यों नहीं बढ़ते लेकिन बाल क्यों बढ़ते हैं?

अब मैं पाठ्य पुस्तक से प्रश्न करूंगा
हमें कुछ चीजों के घनत्व बताये गये जैसे ; पानी, बर्फ, एल्यूमिनियम, आलपिन, रेत, लकड़ी, लोहा, सोना, चांदी, मिट्टी का तेल, मोम, रबर, कार्क और कांच। हमारी कक्षा में इसका प्रयोग किया गया।

टीचर व विद्यार्थियों के बीच इस प्रश्न पर बड़ी चर्चा हुई। विद्यार्थी कहते हैं कि जो वस्तु पहले डालेंगे वो वस्तु पहले डूबेगी। इस चर्चा में अभी कोई भी उत्तर नहीं निकल पाया है। आप बतायें इस प्रश्न का सही उत्तर क्या है?

हमारी कक्षा में जब कभी प्रयोग नहीं हो पाते हैं तो लड़के व लड़कियां आपको दोषी ठहराते हैं, कहते हैं कि इस प्रकार के प्रयोग दिये हैं तो थोड़ी मदद करनी चाहिए, क्या आप प्रयोग में हमारी मदद कर सकते हैं।
आपके और नये सुझावों के इंतज़ार में

नरेन्द्र कुमार यादव
कक्षा आठवीं होशंगाबाद

हमारे यहां ग्राम जासलपुर में आठवीं कक्षा तक स्कूल है। हमारे गांव की लड़कियां आगे पढ़ना चाहती हैं। परन्तु यहां आगे पढ़ने के लिए स्कूल उपलब्ध नहीं है और लड़कियां आठवीं कक्षा तक पढ़कर स्कूल छोड़ देती हैं। अतः शासन से अनुरोध है कि हमारे ग्राम जासलपुर, जो होशंगाबाद से 7 कि.मी. दूर पिपरिया रोड पर स्थित है, में जल्द से जल्द हाई स्कूल खुलवाने का प्रयत्न करें।

कु. मीरा मेहरा
कक्षा आठवीं
शा.पू.मा. शाला जासलपुर

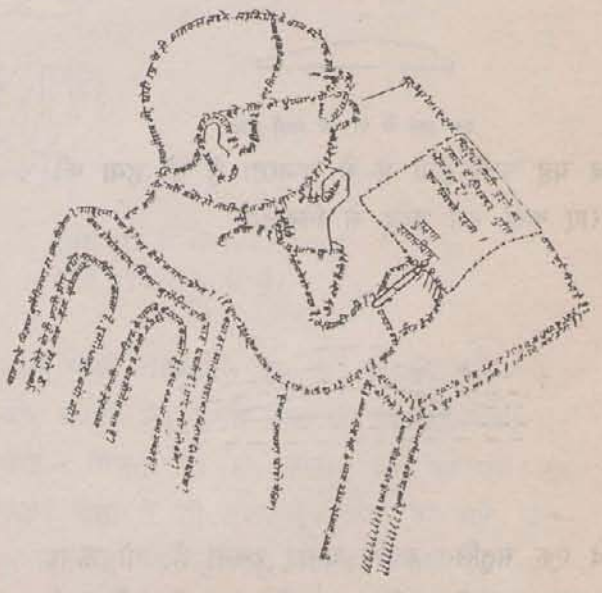

सवालीराम

पक्षी कैसे उड़ते हैं?

-जगदीश टांक

प्रिय श्री टांक,
पक्षी कैसे उड़ते हैं? आपके इस प्रश्न का उत्तर, मुझे डर है कि कहीं बहुत जटिल न हो जाए। और कहीं सरल बनाने के चक्कर में गलत न हो जाए, फिर भी कोशिश करता हूं।

पक्षियों के उड़ने के पीछे मूल सिद्धांत हवा के दबाव से संबंधित है। जब हवा की गति (चाल) तेज होती है तो दबाव कम हो जाता है। यही सिद्धांत हवाई जहाजों की उड़ान में भी उपयोग किया जाता है। आइये थोड़ा विस्तार में इसे देखें।
पक्षी के पंख कुछ इस तरह के होते हैं कि उनकी ऊपरी सतह गोलाई लिए हुए और निचली सतह सपाट होती है। यदि इसकी आड़ी काट को देखें तो कुछ इस तरह दिखाई देगी

एक पक्षी के पर की आड़ी काट

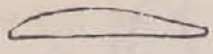

अब यह पक्षी हवा में से गुजरता है तो हवा की धाराएं कुछ इस तरह से निकलेंगी

यदि एक संतुलित बहाव बनाए रखना है, तो ऊपर की धारा व नीचे की धारा की चाल भि -भि होना चाहिए। आप देख सकते हैं कि ऊपर की धारा उतने ही समय में ज़्यादा दूरी तय कर रही है। मतलब उसकी चाल ज़्यादा है। इसके कारण परों के ऊपर का दबाव नीचे की तुलना में कम हो जाता है। दबाव की इस भि ता के कारण कई सारे बल क्रियाशील हो जाते हैं।

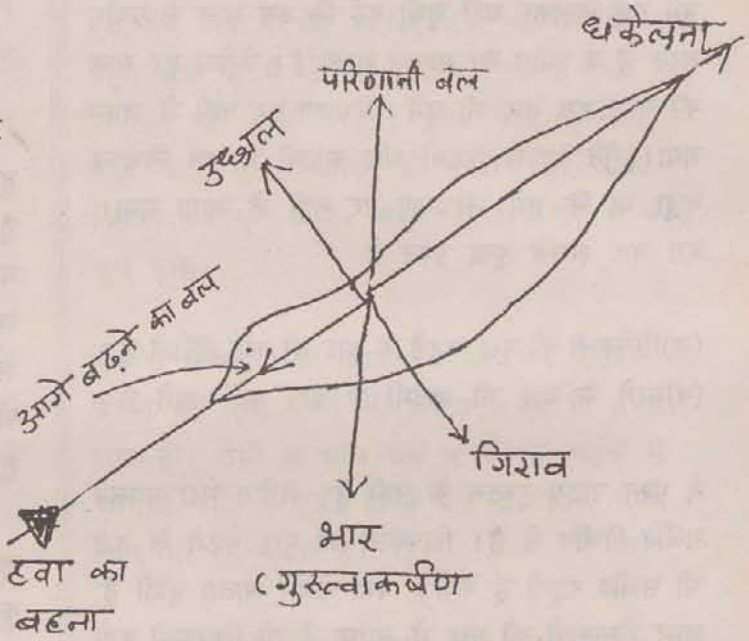

यह बर्नोली का सिद्धांत है।
ये बल किन दिशाओं में व कितने परिमाण में लगेंगे यह कई बातों पर निर्भर करता है। वैसे ऊपर जो विवरण दिया है वह एक प्रकार से निष्क्रिय उड़ान (passive flight) के बारे में है। आपने देखा होगा कि कई पक्षी इसी प्रकार से हवा में टंगे रहते हैं। ये अपने परों को फड़फड़ाते नहीं। ऐसी उड़ान (जिसे gliding कहते हैं) में पक्षी मुख्यतः हवा की धाराओं का उपयोग करते हैं। थोड़ा उड़ने के बाद संभव है कि वे हवा की किसी ऊष्ण धारा में पहुंच जाएं जो ऊपर की ओर उठ रही है। इसके अलावा अपने शरीर का कोण पंखों के माध्यम से बदलकर ये ऊपर या नीचे आते-जाते रहते हैं. आप ध्यान देंगे कि शरीर का कोण बदलते ही सारे बलों की दिशाएं बदल जाएंगी।

आपने यह भी ध्यान दिया होगा कि इस प्रकार की gliding अक्सर बड़े पक्षी करते है और काफी ऊंचाई पर करते हैं। इसका कारण यह है कि बड़े पक्षियों के डैनों (परों) के ऊपर व नीचे, हवा के दबाव में काफी अंतर हो सकता है और काफी ऊंचाई पर हवा की ऐसी धाराएं होती हैं जिनमें पक्षी टंगा रह सकता है।

इस संबंध में पक्षी के भार और उसकी सतह के क्षेत्रफल का अनुपात बहुत महत्वपूर्ण है। बड़े पक्षियों में यह अनुपात ज़्यादा अनुकूल होता है। मुख्य बात तो यह है कि हवा के दबाव में अंतर के कारण इतना बल लगना चाहिए जो पक्षी के भार के बराबर हो।

अब देखते हैं कि पंख फड़फड़ाकर उड़ान कैसे भरी जाती है। इसमें पंख की गति काफी जटिल होती है। और इस गति के द्वारा ही उछाल और आगे बढ़ने का बल प्राप्त किया जाता है।

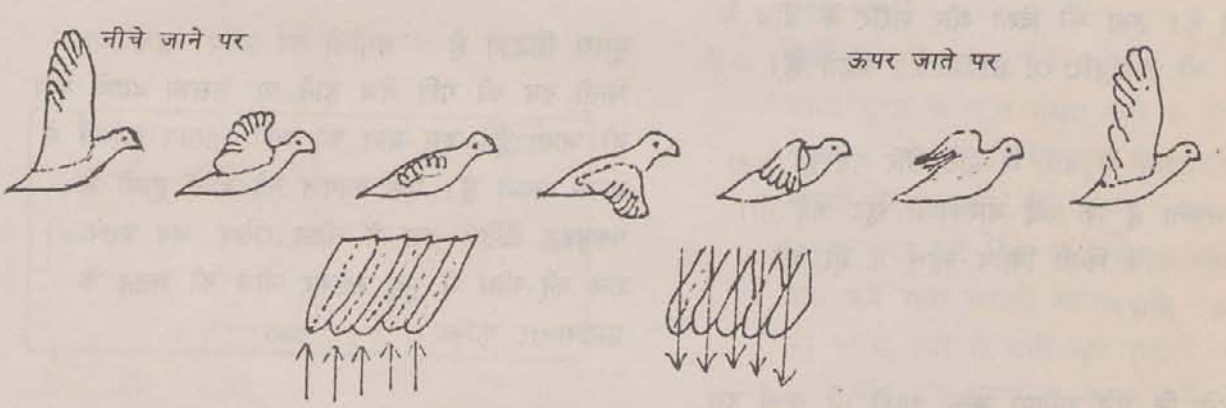

हवा परों को नीचे से धकेलती है।

हवा परों के बीच की जगह में से निकल जाती है।

जब पक्षी परों को नीचे की तरफ चलाते हैं, तो पंख आपस में सटकर बीच में जगह नहीं बचने देते। इसलिए जब पर नीचे आते हैं तो उन पर हवा का धक्का लगता है। इससे पक्षी को उछाल मिलती है । किन्तु जब पंख ऊपर जाते हैं तो परों के बीच में जगह हो जाती है और हवा इनके बीच में से होकर निकल जाती है। इससे ऊपर से हवा का दबाव नहीं लगने पाता। पंखों को ऊपर-नीचे करने की क्रिया से ही पक्षी को उछाल का बल मिलता है। इस काम को करने के लिए शक्तिशाली मांसपेशियां होती हैं।

इसके बाद उड़ान के एक और पहलू पर विचार करते हैं। आपने देखा होगा कि कई बार पक्षी पंख फड़फड़ाते हुए एक ही जगह टिके रहते हैं - मतलब उड़ते तो रहते हैं पर आगे नहीं बढ़ते। ऐसा तब कई बार देखने में आता है जब पक्षी किसी कमरे मे कैद हो जाता है। वह खिड़की के शीशे के पास फड़फड़ाता रहता है। ऐसे वक्त पर निम्नलिखित क्रिया होती है।

आमतौर पर शरीर लंबवत् (ऊर्ध्व स्थिति में) रखा जाता है। अतः अब पर ऊपर-नीचे की बजाय आगे-पीछे फड़फड़ाते हैं। परों का सिरा एक की आकृति में चलता है।

आगे चलते वक्त पंख हवा को तिरछा नीचे की ओर दबाता है। इससे हवा की विपरीत दिशा में उछाल मिलता है। इस उछाल बल का एक अंश ऊर्ध्व दिशा में भी होता है। आगे की गति के अंतिम बिंदु पर पहुंचकर पर घूम जाता है। अब इसका निचला हिस्सा ऊपर की तरफ आ जाता

है।और पीछे की गति शुरू होती है। फिर एक बार हवा को दबाया जाता है और उछाल मिलती है। इस उछाल बल का भी एक अंश ऊर्ध्व दिशा में होता है। दोनों उछाल बलों के क्षैतिज अंश एक दूसरे से संतुलित हो जाते हैं और पक्षी क्षैतिज दिशा में न तो आगे जाता है और न पीछे। ऐसी उडान को hovering कहते हैं।

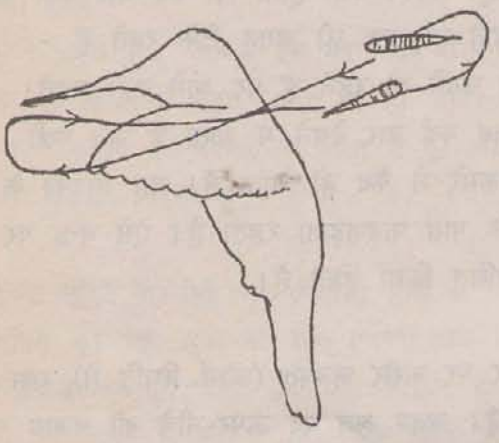

जब पक्षियों को तेजी से ऊपर उड़ना या नीचे आना होता है तो वे अपने शरीर का कोण उपयुक्त तरीके से बदलते हैं। हवा की दिशा और शरीर के बीच के इस कोण को Angle of attack कहते हैं।

मैंने ऊपर उड़ान के बारे में मोटे तौर पर ही कहा है। हो सकता है कि कई बारीकियां छूट गई हों। यदि आपकी रूचि किसी विशेष पहलू में हो, तो कृपया पुन लिखें।

इसके पहले कि पत्र समाप्त करूं, थोड़ी सी चर्चा इस बात पर करें कि उड़ान का नियंत्रण किस प्रकार किया जाता है और ढेरों कलाबाजियां कैसे लगाई जाती हैं। इसमें एक ध्यान देने की बात यह है कि किसी भी जंतु को कलाबाजी और स्थिरता के बीच एक संतुलन बनाना पड़ता है।

कई पक्षी हवा में गोल-गोल घूमते हैं तो कई जिमनास्टिक्स के करतब करते हैं। इसके लिए एक पंख को थोड़ा सिकोड़ना, किसी एक पंख को ज़्यादा तेजी से फड़फड़ाना, पूंछ को गोल घुमाना, दो पैरों में से एक को बाहर निकाल कर उस तरफ का संतुलन बदल देना, परों को आगे की तरफ मोड़कर गुरुत्व बिंदु को आगे धकेल देना, पूंछ को ऊपर-नीचे करना, वगैरह का उपयोग किया जाता है। अब आप पत्र लिखें कि और क्या जानना चाहेंगे।

सवालीराम

पुन. आपने देखा कि पक्षियों के उडने में प्रमुख सिद्धांत यह है कि वह अपने आपको हवा से हल्का कैसे बनाता है। इसके लिए पक्षियों के शरीर में कई अनुकूलन हुए हैं। इन अनुकूलन के पीछे प्रमुख बात है कि शरीर के भार और सतह के क्षेत्रफल का अनुपात कम से कम हो। सतह को बड़ा करने में पंख की बड़ी भूमिका है। इनको फैलाने पर शरीर की कुल सतह का क्षेत्रफल बहुत बढ़ जाता है।

दूसरा सिद्धांत है - बर्नोली का प्रमेय। हवा या किसी द्रव की गति तेज होने पर उसका दबाव कम हो जाता है। इस बात को आप आसान प्रयोगों से समझ सकते हैं। एक कागज को दोनों हाथों से पकड़कर क्षैतिज तल में सीधा रखिए. अब इसके तल की सीध में मुंह रखकर नीचे की सतह के समानान्तर फूंकिए।

प्रश्न पत्र और परीक्षा

कक्षा 6वीं
सामाजिक अध्ययन तिमाही परीक्षा
अक्टूबर, 1988

नाम .....
शाला.....

- परीक्षा में छात्र पाठ्य पुस्तक साथ रख सकते हैं।
- कापी साथ रखने की अनुमति नहीं है।
- प्रश्नों के उत्तर हर प्रश्न के बाद छोड़ी गई जगह में देने है। जगह कम पड़ने पर शिक्षक से खाली कागज ले सकते हैं।

इस प्रश्न पत्र को हल करने के लिए ढाई घन्टे का समय है।

प्र.1 निम्न स्केच के आधार पर मानचित्र बनाओ।
पैमाना 1 मीटर = 2 से. मी.

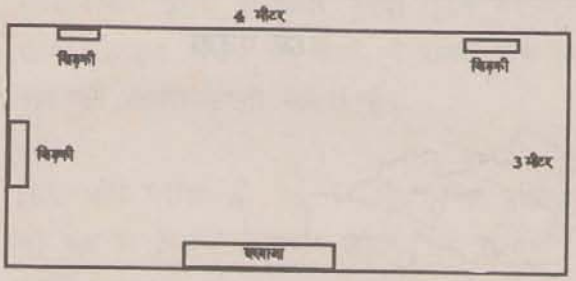

मानचित्र के साथ संकेत भी बनाओ और दिशाओं को भी दर्शाओ।

सही/गलत बताओ --

1. दक्षिणी दीवार पर एक खिड़की है।
2. पूर्वी दीवार पर एक दरवाज़ा है।
3. पश्चिमी दीवार पर एक खिड़की है।
4. उत्तरी दीवार पर एक खिड़की है।
5. पूर्वी दीवार पर कोई खिड़की नहीं है।

प्र.2 पृष्ठ - 140 के मानचित्र को देखकर निम्न स्थानों की वास्तविक दूरी किलोमीटर में बताओ।

1. रायसेन से नरसिंहपुर
2. शहडोल से रायगढ़

प्र.3 शिक्षक प्रत्येक बच्चे से खाली नक्शे में बिना पुस्तक देखे कम से कम 10 राज्यों के नाम लिखवाएं।

प्र.4 शिकारी मानव नाच का संस्कार क्यों करते थे?

पृष्ठ -6 पढ़कर अपने शब्दों में उत्तर लिखो।

प्र.5 शिकारी मानव भोजन, औजार आदि का अधिक मात्रा में संग्रह करके क्यों नहीं रख पाता था?

प्र.6 नीचे दी हुई कहानी को पढ़ो --

झांभा झुण्ड के लोग नर्मदा नदी के कछार पर आदमगढ़ की पहाड़ी में रहते थे। वहा के जंगलों में खूब सारे मीठे फल, कंदमूल व शिकार साल भर मिल जाते थे। साथ ही हर साल खूब सारा जंगली अनाज भी काट लाते थे। नर्मदा नदी में उन्हें खूब मछली भी मिल जाती थी। इस कारण ये बहुत दिनों से उसी पहाड़ी पर रहते रहे। झांभा झुण्ड के लोगों को पता चला कि सुंगा झुण्ड के लोगों ने खेती करना शुरू कर दिया है। झांभा झुण्ड के कुछ लोगों ने भी खेती करना सीख लिया। फिर भी झांभा झुण्ड के लोगों ने खेती नहीं की। वे पहले की तरह शिकार करके व फल, कंद, अनाज बटोरते रहे।

खेती का पता चलने पर भी झांभा झुण्ड के लोगों ने खेती क्यों नहीं शुरू की?

प्र.7 तालिका भरो

स्थान	शिकारी मानव के समय	शुरू के गांव के समय
रहने की जगह भोजन की वस्तुएं पहनावा औजार भोजन पकाने का तरीका		

प्र.8 ग्राम पंचायत की बैठक में क्या होता है?

प्र.9 तालपुर की आबादी 2000 है। तालपुर पंचायत में दो और गांव भी हैं। पंचायत में 11 पंच और एक सरपंच हैं - सभी पुरुष। रावणपुर की पंचायत के चुनाव 3 साल पहले हुए थे। हर छः महीनों में पंचायत की बैठक होती है।

ऊपर दिए गए विवरण के अनुसार रावणपुर की पंचायत में क्या चीजें ठीक नहीं हैं?

प्र.10 हरिशंकर की आमदनी 1000 रू. मासिक है। वह हरदा शहर में रहता है उसके घर में 5 सदस्य हैं- 3बच्चे, पत्नी और स्वयं हरिशंकर नीचे दी गई किन चीजों पर कितना खर्च होता होगा - सोच कर लिखो।

मकान किराया भोजन (किराने आदि) पर खर्चे कपड़ों पर बच्चों की पढ़ाई (कापी, पेन्सिल, पुस्तक) ईंधन अन्य वस्तुओं पर बचत	

प्र.11 निम्नलिखित तालिका पढ़कर तीर द्वारा दर्शाओ कि कौन सी चीज कहां से कहां जा रही है?

वस्तु का नाम	कहां से	कहां तक
गेहूं	बरबटपुर	मनका गांव, कैलाशनगर
सोयाबीन	-	-
टोकरी	मनका गांव	बरबटपुर, कैलाशनगर
मटके	--	--
हल की फाल	--	--
रेडियो	कैलाशनगर	मनका गांव, बरबटपुर
सायकिल	--	--

मध्य प्रदेश

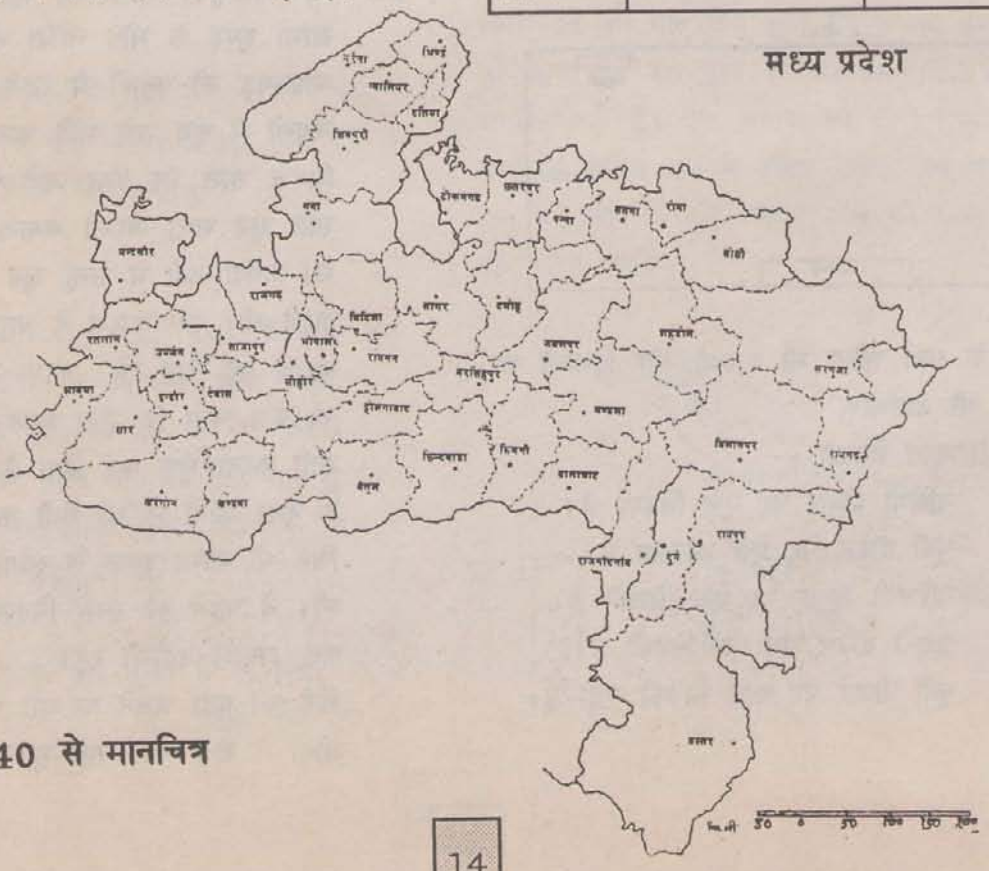

पृष्ठ 140 से मानचित्र

सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम मूल्यांकन समीक्षा कार्यशाला

14-19 जुलाई, 1989

ऐसी कार्यशाला का विचार

सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम के तहत ओपन बुक परीक्षा रखने की बात शुरू से ही रही है। कई बार इस मुद्दे पर विचार विमर्श की उथल-पुथल मची है। छमाही, तिमाही में बच्चों की तरफ से कुछ कठिनाईयां भी सामने आई थीं जैसे - किताब पास होने के फेर में परीक्षा से पहले न पढ़ना व तैयारी न करना, परीक्षा में पन्ने पलटते रहना और उत्तर न ढूंढ पाना। बोर्ड में भी ओपन बुक परीक्षा रखेंगे यह निर्णय गहरी चिन्ताओं के साथ लिया गया।

साथ ही बच्चों की कुछ कठिनाईयों को परीक्षा पूर्व रिवीज़न के समय दूर करने का प्रयास किया गया। जैसे - पाठ के सार लिखकर, व उपशीर्षकों की मदद लेकर, प्रश्नों के उत्तर जल्दी ढूंढने का अभ्यास छात्रों से हल कराए गए ताकि वे समझ सकें कि पाठ की तैयारी करनी जरूरी है।

फिर, बोर्ड परीक्षा हो गई, - और उत्तर पुस्तिकाओं को सब ने मिलकर जांचा। हमारी नई मूल्यांकन पद्धति पर हम सब के मन में कई प्रश्न कुलबुला ही रहे थे - जांचते वक्त कई और प्रश्न जुड गए मसलन - बच्चे किताब से नकल कर के लिख रहे हैं -तो हम मूल्यांकन किस बात का कर रहे है?

अपने शब्द में लिखने वाले को अधिक अंक तो देने चाहिए, पर कितने अधिक? अपने शब्द में लिखने का अभ्यास कक्षा में ठीक से कराया नहीं गया है, और जब पुस्तक में ठीक से लिखा उत्तर आसानी से उपलब्ध है तो बच्चों से "अपने शब्दों" में लिखने की मांग अजीब नहीं है? बच्चे अपने शब्द में वैसे ही अधिक नहीं लिख पाते हैं।

बच्चों द्वारा पुस्तक से उत्तर उतारने में भी कई स्तर दिख रहे थे। स्पष्ट सटीक उतारना, आलतू-फालतू बातें भी उतारना, पुस्तक के ही अलग-अलग लिखे वाक्यों का उपयोग करते हुए, उन्हें अपने विचार से जोड़ते हुए उत्तर लिखना। छात्रों की क्षमता का मूल्यांकन करने में इन अलग-अलग स्तरों का क्या महत्व मानें?

हमने जो बातें सोच कर प्रश्न बनाये थे, बच्चों ने उन प्रश्नों के कई फर्क अर्थ लगाए और उसके अनुरूप उत्तर दिये। ऐसा क्यों हुआ? और इस स्थिति में मूल्यांकन कैसे करें?

वस्तुनिष्ठ (सही/गलत आदि) प्रश्नों में तुक्के और "नक्ल" का इतना असर दिखा कि ऐसे प्रश्न बिल्कुल संदिग्ध व मूल्यांकन की दृष्टि से अनुपयोगी लगे। फिर भी सरल, सीधी जानकारी की समझ जांचने वाले कुछ तो प्रश्न रखने होंगे। कैसे हों ये प्रश्न? प्रश्न पत्र में कई प्रश्न व उनके भाग ऐसे थे जिनके उत्तर पुस्तक के एक दो कालम से ही मिल जाते थे क्या इस वजह से प्रश्न-पत्र बच्चों के लिए बहुत सरल हो गया?

फिर कई प्रश्नों के भागों की विषय वस्तु भी मिलती जुलती सी थी। उदाहरण के लिए

क- सिबु की हत्या के अपराध में मुरिया समाज ने बरसु को क्या सज़ा दी?

ख- बड़े भाई की हत्या के अपराध में वेल्लाल समाज ने छोटे भाई को क्या सज़ा दी?

मिलती-जुलती विषय वस्तु के कारण "क" भाग का उत्तर "ख" भाग में और "ख" का उत्तर "क" में देने या इस कारण उत्तर लिखने में भ्रमित होने की बात भी सामने आई। फिर क्या हमें पूरी किताब में से बिल्कुल भिन्न-भिन्न विषयों पर अनेक छोटे-छोटे प्रश्न पूछने चाहिए?

ऐसा करने से प्रश्न पत्र के बहुत लंबे हो जाने और बच्चों द्वारा सारे प्रश्नों के उत्तर न ढूंढ पाने की समस्या पहले ही तिमाही परीक्षा में पैदा हो चुकी थी। तो फिर क्या करें?

बहुत से बच्चों के कई उत्तर (अपने शब्दों में लिखे हुए) बहुत ही प्रभावशाली व आश्चर्यजनक थे - या यों कहें कि "दिल खुश" करने वाले थे। उन उत्तरों में क्या था जो हमें अच्छा लग रहा था? कितने बच्चों ने इस प्रकार की क्षमता दर्शाई? इस में नए पाठ्यक्रम, शिक्षण-परीक्षण विधि-का क्या असर है? ऐसे कई प्रश्नों में उलझे-डूबे हम लोगों ने एक मूल्यांकन समीक्षा कार्यशाला की जरूरत महसूस की। कार्यशाला की शुरूआत इस चर्चा से हुई कि प्रश्नों को बनाने की प्रक्रिया के दौरान किन-किन बातों का ध्यान रखा जाता है।

प्रश्न पत्र का स्वरूप

1. प्रश्नों में पूरी विषय वस्तु का निचोड़ हो।
2. बच्चों का सही मूल्यांकन वर्णनात्मक प्रश्नों से ही होता है। प्रश्न पत्र में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के साथ उचित मात्रा में वर्णनात्मक प्रश्न भी आवश्यक हैं।
3. अलग-अलग स्तरों के बच्चों के लिए प्रश्न होने चाहिए - कुछ प्रश्न निम्न स्तर के बच्चों के लिए कुछ मध्यम श्रेणी तथा कुछ उच्च स्तर के लिए।

इस विषय पर लम्बी चर्चा हुई। क्या हम वास्तव में बता सकते हैं कि कठिन प्रश्नों को उच्च स्तर के बच्चे ही कर पाएंगे और निम्न स्तर के नहीं या फिर क्या आसान प्रश्न वास्तव में कठिन नहीं निकलते? और अगर ऐसा है तो प्रश्न पत्र में अंकों के पुन निर्धारिण की गुंजाइश रखना जरूरी है।

कार्यशाला में प्रश्नों की समीक्षा का कार्य प्रारंभ हुआ। हालाकि शुरू में तय किया था कि केवल प्रश्नों की समीक्षा होगी - और यह चर्चा उत्तरों के आधार पर नहीं होगी - यह संभव नहीं था अंतत प्रश्नों की समीक्षा-उत्तरों के संदर्भ में ही हुई।

प्रश्नों की समीक्षा

प्र.1 नक्शा/स्केच जो पैमाने के अनुसार नहीं बना था उसे पैमाने के अनुसार सुधार कर बनाना था। पैमाना दिया हुआ था और स्केच पर वास्तविक दूरियां लिखी थीं। साथ ही बच्चों को दिशा लिखनी थी और दिशा ज्ञान और संकेतों को पहचानने की क्षमता को जांचने वाले प्रश्नों का उत्तर लिखना था। चर्चा में यह बात सामने आई कि इस प्रश्न में बहुत सारी अवधारणाओं व क्षमताओं की जांच की जा रही है।

1. नापना
2. पैमाने का उपयोग कर पाना
3. दिशाओं की सापेक्षिक समझ
4. नक्शे में दिशा दिखाने की पद्धति
5. संकेत पढ़ पाना व पहचानना...

यह मत बना कि एक साथ और मिले जुले तरीके से इतनी सारी बातें जांचना गलत होगा। प्रत्येक अवधारणा को अलग-अलग जांचना चाहिए।

उदाहरण के लिए अगर हम बच्चे के पैमाने के ज्ञान को जांचना चाहते हैं तो उसी प्रश्न में बच्चों से नपवाना भी गलत होगा - अगर बच्चा ठीक से नहीं नाप पाता तो यह जांचना असंभव है कि गलती पैमाने के उपयोग में हुई या नापने में।

दिशा के बारे में दो मुख्य बातें सामने आई --
1. इसमें दिशाओं की सापेक्षिक स्थिति के ज्ञान का मूल्यांकन हो सकता है।
2. या इस परंपरा के ज्ञान का कि नक्शे में उत्तर दिशा ऊपर की तरफ़ होती है।

यहां भी दो भिन्न बातों को एक ही प्रश्न से जांचा गया है। अगर बच्चा दिशा सही बताये मगर उत्तर को ऊपर न रखे तो क्या करें?

दिशा और संकेतों पर जो प्रश्न है - उसमें भी दो भिन्न बातों को एक ही प्रश्न से जांचा गया है। साथ ही नक्शे में उनसे कहा गया है कि वे दिशा सही जगह पर लिखें - अगर वे दिशा वहां ठीक से न लिखें तो प्रश्न एक का दूसरा हिस्सा पूरा गलत निकलेगा।

कुछ लोगों को यह लगा कि स्केच देने से भ्रम पैदा होता है - केवल हम निर्देश दें कि उत्तरी दीवार -- मीटर लम्बी है आदि। साथ ही इस प्रश्न में स्केच के ऊपर पैमाना देने के कारण यह स्पष्ट नहीं हुआ कि यह पैमाना स्केच का है या नक्शा बनाने के लिए दिया गया है।

प्र.4 *(शिकारी मानव नाच का संस्कार क्यों करते थे?)* पुस्तक को पढ़कर उन्हें अपने शब्दों में लिखना था। यह पाया गया कि अधिकतर बच्चों ने उत्तर पुस्तक से उतारा -- अपने शब्दों में नहीं लिखा। ऐसा लगा कि जिस विषय को पुस्तक में एकाध वाक्यों में ही निपटाया गया है उस पर ऐसे प्रश्न पूछना नहीं चाहिए। एक तो बच्चों के मन पर इस विषय की कोई गहरी छवि नहीं बनी है। और अगर पुस्तक में उत्तर स्पष्ट वाक्य में है तो बच्चों को अपने वाक्य बनाने की जरूरत ही नहीं महसूस होगी। अगर कोई बात 3-4 पैरा में हो तो कम से कम सार निकाल कर लिखने की जरूरत पड़ती है।

यह भी कहा गया कि यह प्रश्न उतना आसान नहीं है जितना लगता है। नाच के बारे में ड़ेढ पृष्ठ हैं। जिसमें इस प्रश्न के उत्तर होने की संभावना 2-3 पैरा में है - तो बच्चे को सही पैरा चुनना था।

यह लगा कि बच्चों की अपने शब्दों में लिखने की और किसी विषय को आत्मसात करने की क्षमता का आकलन ऐसे प्रश्नों से नहीं होगा - अगले प्रश्न में (नं. -5) में इस तरह का आकलन संभव होता है।

प्र.5 अधिकतर बच्चों ने अपने शब्दों में अपनी समझ के अनुसार उत्तर लिखा।
वास्तव में इसका उत्तर पुस्तक में नहीं है। बच्चों को पाठ की जानकारी के आधार पर अनुमान लगाना था।

प्र.6 रात की सभा में फिर प्रश्न 6 से चर्चा शुरू हुई। इसमें दिए गद्य को पढ़कर बताना था कि झुण्ड के लोगों ने खेती क्यों नहीं की।

बच्चों से इस उत्तर की अपेक्षा थी कि उन्हें आसानी से शिकार मिल जाता था तो खेती की जरूरत नहीं पड़ी। उन्हें आसानी से यह सब मिल जाता था - यह बात गद्य में साफ लिखी है - अब इस बात पर विवाद छिड़ गया कि इस प्रश्न में बच्चों की कौन सी क्षमता का मूल्यांकन हो रहा है और उसका क्या महत्व है।

कुछ लोगों का मत था कि यह केवल एक आसान

जानकारी ढूंढ़ने का प्रश्न है। प्रश्न 4 जिसमें कई बातों में से एक को ढूंढ़ निकालना था, उससे भी आसान है। आखिर इसमें फालतू जानकारी नहीं है।

अन्य लोगों ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि गद्य में कारण दिया है और उसका अंजाम भी - मगर इन दोनों को जोड़ा नहीं गया है। गद्य में कहीं यह नहीं कहा गया है कि इस कारण से यह हुआ - अतः बच्चों को यह कार्य-कारण संबंध खुद बनाना था। इस कारण यह एक जानकारी का प्रश्न न रहकर कारण बताने का प्रश्न बन जाता है - हालाकि बहुत ही आसाने किस्म का।

प्र.7 तालिका में शिकारी मानव और शुरू के गांव के लोगों की बातें अलग-अलग बिन्दुओं पर भरनी थीं। चर्चा छिड़ी कि यह जानकारी का प्रश्न है या तुलना का है? इस प्रश्न का उत्तर देने में बच्चों को तुलना करने पर बाध्य नहीं किया जा सकता है - अगर वे तुलना करें तो वह एक इत्तफ़ाक होगा कि उन्हें दोनों समाज की बातें एक साथ सोचीं। प्रश्न में तुलना करने की जरूरत नहीं है।

अगर इसे विशिष्ट रूप से तुलना का प्रश्न बनाना था तो शायद तालिका में तुलना के बिन्दु न देकर पूछना चाहिए था कि दोनों समाज में समानता व असमानता सोचकर लिखो ......।

यह प्रश्न तुलनात्मक इसलिए भी नहीं है क्योंकि अगर एक बच्चा शिकारी समाज की बातें सब ठीक लिखे और गांव की सारी बातें गलत लिखे या न लिखे, उसे तो नंबर देने पड़ेंगे।

प्र.8 देर रात को इस प्रश्न पर विचार शुरू हुआ। पंचायत बैठक में क्या होता है?
एक विचार था कि प्रश्न की अस्पष्टता ही उसकी खूबी है। बच्चे कई तरह से समझ कर इसका उत्तर देंगे - जिससे उनके मन में पंचायत के बारे में जो छवि बनी वह उभर कर आयेगी। चाहे वह पुस्तक के आधार पर बनी हो या बच्चे के व्यावहारिक ज्ञान पर। हांलाकि पुस्तक में एक पैरा है जिसका शीर्षक ग्राम पंचायत की बैठक है। पर यह एक मुश्किल पैरा है और इसमें इस प्रश्न का उत्तर खास नहीं मिलता। इसलिए अधिकांश बच्चों ने पुस्तक से हटकर ही उत्तर दिया है इसलिए उत्तरों में बहुत अन्तर है और उनके मूल्यांकन का सामान्य आधार तय करना कठिन हो जाता है।

जो मुद्दा प्रश्न 4 के संदर्भ में उठा था वह फिर से सामने आया। ग्राम पंचायत की बैठक की विस्तृत छवि पाठ से नहीं बन पाती है। ऐसे विषय पर प्रश्न पूछने से हम बच्चों की समझ का सही मूल्यांकन नहीं कर पाते हैं क्योंकि ठीक से समझ ही नहीं बन पाती है।

चर्चा व समीक्षा के कुछ निष्कर्ष बिन्दु:

1. जिन बातों का उत्तर सीधे एक जगह किताब में है उन पर "अपने शब्द" में लिखने की बात नहीं जांचनी चाहिए - इनमें जांचना यह चाहिए कि बच्चे सही उत्तर ढूंढ कर सटीक अंश उतार पाते है या नहीं। चूंकि सभी बच्चे यह भी नहीं कर पाते हैं यह एक जांचने लायक क्षमता बन जाती है जो कि बच्चों द्वारा पुस्तकें पढ़ने, समझने, व इस्तेमाल कर पाने के लिए एक महत्वपूर्ण क्षमता है।

2. एक प्रश्न में एक स्पष्ट बात का मूल्यांकन हो। वो तीन मिलीजुली अन्तर्निर्भर बातों का नहीं।

3. अपने शब्दों में लिखने की क्षमता की जांच ऐसे प्रश्नों से हो जो दो-तीन अलग-अलग जगह दी गई जानकारियों के आधार पर उत्तर मांगे या फिर जिस जानकारी के आदार पर उत्तर मांगे वह पाठ में विस्तार से दी गई हो ताकि उसका सार अपने शब्दों में लिखा जा सके। ऐसे प्रश्न बच्चों को अपनी बात अभिव्यक्त करने का मौका देते हैं और इनसे बच्चों की समझ व क्षमता की अच्छी झलक मिल पाती है।

4. जिन बातों को पाठ में ठीक से विकसित नहीं किया गया हो उन बातों पर प्रश्न शायद नहीं पूछने चाहिए।

मां-बाप के प्रति कर्त्तव्य

(बांग्ला जन-विज्ञान पत्रिका उत्सो-मानुष के दिसंबर 82 अंक में प्रकाशित लेख)

अशोक रूद्र

मैं जब स्कूल में निचली किसी कक्षा में पढ़ता था, एक बार परीक्षा में ऐसे निबंध लिखने को कहा गया; विषय 'माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य'। हम सब ने बचपन से जो कुछ सीखा है, वहीं मैंने लिखा था - माता-पिता बच्चों के लिए क्या-क्या नहीं करते, उनका सम्मान करना चाहिए, बड़ी उम्र में उनकी सेवा करनी चाहिए आदि। पर एक बदमाश किस्म के लड़के ने लिखा था, मां-बाप के प्रति हमारा कोई भी कर्त्तव्य नहीं। मेरा जन्म कोई अपनी इच्छा से तो हुआ नहीं। जन्म के पहले मैंने जन्म लेने के लिए रोया-पीटा नहीं। इसलिए मेरा कोई कर्त्तव्य क्यों?

उस वक्त लगा था कि वह लड़का बड़ा बदमाश है, मां-बाप के प्रति कर्त्तव्य जैसी एक बुनियादी बात को नहीं मानता। इसके बहुत बाद, जितना भी सोचा है, हमेशा ऐसा लगा है कि उस बदमाश लड़के ने कितनी सच बात कही थी।

एक और सच्ची घटना मेरे दिल में हमेशा के लिए बैठ गई है। उन दिनों मैं बंबई विश्वविद्यालय में पढ़ा रहा था। एम. ए. की कक्षा में मेरी एक छात्रा थी, शक्ल से साधारण सी, कभी क्लास में आती तो कभी नहीं आती। मन ही मन मैं उससे परेशान था क्योंकि मेरा खयाल था कि वह पढ़ाई-लिखाई को गंभीरता से नहीं लेती। सालभर उसने मुझसे कोई बात न की थी। परीक्षा के बाद एक दिन वह दौड़ती हुई मेरे कमरे में आई और मेज पर सिर रख आंखों से आंसू बहाती रो पड़ी। वह फेल हो गई थी। मैंने डांटकर कहा, "सालभर काम नहीं किया, अब रो धो कर क्या होगा"? उसने रोते-रोते कहा, मैं काम करना चाहती थी सर, मैं हमेशा पढ़ना चाहती रही हूं। पर मुझे पढ़ने किसी ने न दिया। शादी की समझ आने के पहले ही मेरी शादी कर दी गई। मातृत्व की समझ आने के पहले ही मुझे मां बनना पड़ा। मैंने शादी नहीं करनी चाही, मां होना नहीं चाहा था, मैं तो पढ़ना चाहती थी"।

मां-बाप व बच्चों के संबंध पर सामाजिक विश्लेषण अब तक बहुत कम ही हुआ है। आजकल नारी-पुरूष संबंधों को लेकर बहुत सोच-विचार, शोध और आंदोलन हो रहे हैं। किसी भी समाज में पुरूष-वर्ग नारियों का युगों से शोषण करता रहा है, इस बात को लगभग सभी मानते हैं। यह शोषण..... अलग-अलग ऐतिहासिक परिस्थितियों में किस तरह होता रहा, इस बारे में काफी सोच-विचार व शोध चल रहा है। नारी व पुरुष की प्राकृतिक क्षमता व संभावनाओं में क्या फर्क हैं, प्रागैतिहासिक युग में किस तरह यह शोषण समाज में जड़े जमाने लगा, ऐसे सवालों पर विशेषज्ञों ने ध्यान दिया है। बड़े आश्चर्य की बात है कि मां-बाप व बच्चों के बीच संबंधों पर इस तरह की

चर्चा या शोध नहीं हो रहे। शिक्षण-पद्धति, बच्चों का मनोविज्ञान इत्यादि विषयों पर काफी सोच-विचार हुआ है और इसी का एक हिस्सा-मां-बाप और बड़ों के प्रभाव, पर भी काम हुआ है। पर हम दूसरी एक बात सामने लाना चाहते हैं, विभिन्न पीढ़ियों के बीच जो द्वंद्वात्मक संबंध हैं, इसे समाजशास्त्रियों ने कभी समस्या के रूप में सोचा हो, ऐसा हमें मालूम नहीं है।

हालांकि इस रिश्ते में भी शोषण है, यह साफ दिखलाई पड़ता है। मानव-मुक्ति का उद्देश्य सामने रखकर अगर हम सोचें तो मां-बाप द्वारा जिस तरह बेटे-बेटियों की स्वाधीनता सीमित और खंडित होती है, कभी-कभी बिल्कुल खत्म हो जाती है, वह पुरुषों द्वारा नारी के शोषण से किसी भी तरह कम महत्वपूर्ण नहीं है। क्या चारों ओर हमें यह दिखलाई नहीं पड़ रहा कि इच्छा के खिलाफ या इच्छा के बारे में जानने की कोशिश भी न करते हुए, मां-बाप धूम-धाम से अपनी बेटियों की शादी कर रहे हैं?

यहां तक कि ऐसे अनगिनत उदाहरण क्या हम नहीं देख रहे जहां बेटा क्या पढ़े-लिखे और कैसी नौकरी करे, वह भी मां-बाप तय कर रहे हैं? केवल बेटे की नौकरी और बेटी की शादी ही नहीं, शादी के बाद कितने दिनों में कितने बच्चे हों, वह भी कई बार मां-बाप ही तय कर रहे हैं। हमारे देश में इसे बेटे या बेटी की संतान होना नहीं, पोता-पोती का मुंह देखना मानते हैं। जो बेटा कलाकार बनना चाहता था, उसे पिता जबर्दस्ती इंजीनियरिंग कालेज में डाल देते हैं।

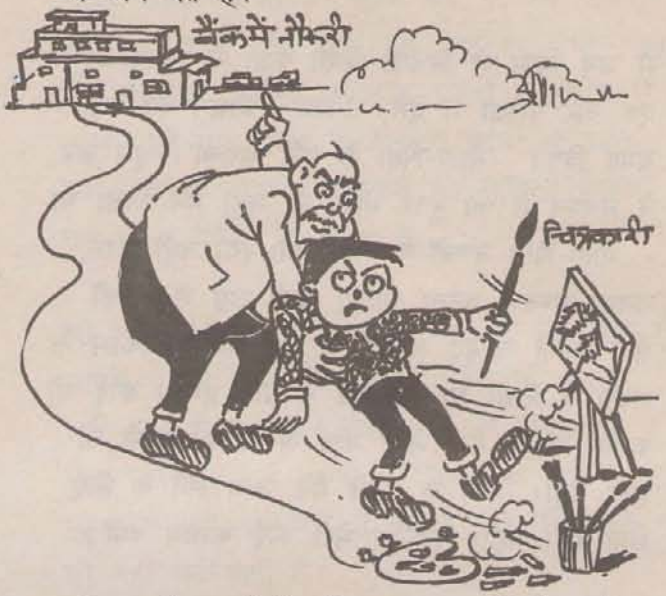

जो लड़की पढ़ाई-लिखाई करना चाहती थी, परीक्षा पास करना चाहती थी, शोध-कार्य या नौकरी करना चाहती थी, कालेज की सीमा पार करते ही उसे माथे पर सिंदूर लगा रसोई व सोने के कमरे की लक्ष्मण-रेखा में बांध दिया जाता है। एक लड़का व एक लड़की एक दूसरे से शादी करना चाहते थे, उन्हें शादी नहीं करने दिया गया। जबर्दस्ती लड़के की या लड़की की कहीं और शादी कर दी गई। शायद जाति ठीक नहीं थी, शायद लड़का अच्छा कमाता नहीं है, शायद लड़की का पिता पर्याप्त दहेज नहीं दे पा रहा।

खैर वजह जो भी हो, शादी जिनकी होती है, उनकी इच्छा को पूरी तरह दबाकर उनके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया बड़ों की इच्छा से। जीविका, विवाह, संतान; ये विषय इतने महत्वपूर्ण हैं कि इनके द्वारा मनुष्य का जीवन पूरी तरह से बंध जाता है। फिर भी इन्हीं विषयों पर हमारे समाज में निर्णय लेने का अधिकार किसी

व्यक्ति की अपेक्षा कहीं अधिक मां-बाप का है।

ऐसी घटनाएं हमारे चारों ओर इतनी हो रही हैं कि हम उनकी ओर देखते भी नहीं हैं। इनमें कोई गड़बड़ है, ऐसा भी हम नहीं सोचते। अगर सवाल उठे तो निश्चित रूप से जवाब मिलता है मां-बाप की अपेक्षा बच्चों को कौन अधिक प्यार कर सकता है? मां-बाप क्या बच्चों का भला नहीं चाहते? ऐसी व्याख्या भुक्त भोगी बेटे-बेटी खुद भी कई दफा करते हैं।

प्रेम एक जटिल बात है। प्यार किसे कहते हैं, वैज्ञानिकों द्वारा इसकी परिभाषा दी गई है या नहीं, इसका स्वरूप ठीक-ठीक समझा गया है या नहीं, यह हमें नहीं मालूम। जो हम सब जानते हैं, वह यह है कि जिन विभि प्रकार की बातों को प्रेम का स्वरूप आम तौर से समझा जाता है, इनके साथ अक्सर ऐसी बहुत सारी बातें मिली होती हैं, जो इंसानियत के विकास में अवरोध लाती हैं; व्यक्ति-स्वाधीनता को सीमित या खंडित करती हैं, जैसे हिंसा, द्वेष व ईर्ष्या, दूसरे पर अपनी इच्छा जबर्दस्ती से थोपना वगैरह। भला क्या है और बुरा क्या है - इस सवाल का जवाब आसानी से नहीं दिया जा सकता।

भलाई की अवधारणा स्थान काल विशेष के साथ अपरिवर्तित या अमिट रहे, ऐसा कुछ नहीं है। हर युग में यह बदलती रही है। केवल यही नहीं, दुनिया व समाज के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान पर यह निर्भर रहती है। उम्र में बड़ा होने पर, संबंधों में सम्माननीय होने पर ही किसी की बातों पर अधिक निर्भर हुआ जा सके - यह बिल्कुल ठीक नहीं। मां-बाप बच्चों को प्यार ज़रूर करते हैं। भलाई की अपनी धारणा के अनुसार बच्चों का भला भी अवश्य चाहते हैं, पर हमारे लिए यह अप्रासंगिक है। यहां प्रासंगिक यह है कि मानव-मुक्ति के आदर्श की एक ज़रूरी शर्त है कि हर इंसान अपनी इच्छानुसार जीवन-यापन कर पाए। जब तक किसी दूसरे की इच्छा का दमन न हो, तब तक हर इंसान अपनी इच्छा से जी सके, यही मुक्ति के आदर्श का अंतिम लक्ष्य है।

यह उद्देश्य तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक एक इंसान पर दूसरे किसी इंसान का अपनी इच्छानुसार नियंत्रण हो, मानो वह पहला व्यक्ति दूसरे व्यक्ति द्वारा खरीदा गया हो। पुरूष नारियों का संपत्ति की तरह उपयोग करते हैं - ऐसा सूत्र नारी-पुरुष संबंधों की चर्चा में आज साधारणतः मान लिया गया है। वस्तु की अवस्था से आजादी पाकर इंसानियत पाने की मांग नारी-मुक्ति आंदोलन का मुख्य नारा है। ज़रा सा गौर करने पर ही यह स्पष्ट हो जाता है कि बच्चों के साथ अपने व्यवहार में मां-बाप उन्हें अपेक्षाकृत अधिक (नारी-पुरुष संबंध की अपेक्षा) संपत्ति की तरह मानते हैं। इसमें कोई चोरी-छिपे की कोशिश भी नहीं होती।

मांएं जब बेटों के लिए बहुओं का चयन करती हैं, तो खुल्लम-खुल्ला कहती हैं, "ऐसी-ऐसी बहू हमें चाहिए." मां की चाह ही मुख्य है, बेटे की चाह कुछ खास नहीं। बच्चे के भविष्य के बारे में मां-बाप खुल्लम-खुल्ला कहते हैं, मेरी बहुत इच्छा है कि मेरा बेटा फलां-फलां बने। बेटे-बेटी की अपनी भी कोई चाह हो सकती है, यह लोग हमेशा भूल जाते हैं। बेटे-बेटी भी खुद ही बेफिक्र होकर अपने को द्वारा नियंत्रित होने देते हैं और इस प्रकार के नियंत्रण में कोई समस्या नहीं देखते।

बेटे-बेटियों पर मां-बाप के इस आधिपत्य की जड़ में एक भौतिक बुनियाद है। बच्चों को ज़िंदा रख उनके बढ़ते रहने का भार मां-बाप ही आमतौर पर लेते हैं। मां के अधिकार की समाज द्वारा स्वीकृत बुनियाद इस तरह की है, "तुझे दस महीने पेट में

रखा, अपनी छाती का दूध पिलाकर इंसान बनाया, अब तू मेरी बात नहीं सुनेगा/सुनेगी" ? पिता के अधिकार की बुनियाद है "तुझे खिला-पहनाकर इंसान बनाया क्या इसीलिए? तूने कुल पर कलंक डाला है, निकल जा घर से"।

स्पष्ट है, मां का संतान को गर्भ-धारण करना और बाद में लालन-पालन कर इंसान बनाना और पिता का उसके अन्न-वस्त्र मिलने रहने का बंदोबस्त करना, यही है मालिकाने की बुनियाद।

वैसे दूसरी कई सामाजिक व्यवस्थाओं और मान्यताओं की तरह इन बुनियादी बातों को भी उंगली उठाकर नहीं दिखाया जाता। मां-बाप की बातों को बच्चे मान लें, या कभी-कभी पूरी तरह न मानने पर भी उनकी बातों को प्राथमिक महत्त्व दें, यह मानों स्वतः सिद्ध है। साथ ही एक और बात स्वाभाविक रूप में हो चली है। मालिकाने का अधिकार गर्भधारिणी जननी और अन्नदाता पिता से फैलकर चाचा-ताऊ-मामा- मौसी-बुआ-चाची आदि तक का हो जाता है। और एक पीढ़ी पर दूसरी पीढ़ी का अधिकार तैयार करता है। हमारे देश में यह अधिकार बड़े भाई-बहनों को भी बेहिसाब मिला है। कई परिवारों में छोटे भाई-बहनों पर ज़बर्दस्त रोब के साथ बड़े भाई अपना शासन चलाते हैं।

इसी प्रसंग में एक बात पर जोर देना चाहिए। जिस शासन-अधिकार की बात यहां हो रही है, वह केवल बालक-किशोर या तरुण-वय युवाओं पर ही प्रयोग हो, ऐसा नहीं है। संतान की उम्र चालीस या पचास होने पर भी इस शासन में कोई कमी नहीं आती। इसी तरह बड़ों से उम्र में कितना अंतर है, उस पर भी विचार नहीं किया जाता। जिस परिवार में बड़े भाई के अधिकार को मान लिया जाता है, वहां चालीस साल के व्यक्ति को भी उम्र में दो-चार साल बड़े भाई का हुक्म बिना प्रतिवाद मान लेने को बाध्य होना पड़ता है।

इस हुकूमत की जो नींव दिखलाई गई है, अर्थात् जन्मदान और अन्नदान करना, इसमें एक बहुत बड़ी दरार है, जिसे कुछ झूठी नैतिक बातों द्वारा भर दिया जाता है। पहली दरार वह है, जिसे मेरी स्कूली उम्र के बदमाश लड़के ने प्रकट कर दिया था। मां ने संतान का गर्भधारण किया, इस वजह से संतान को कृतज्ञ होना चाहिए, यह बड़ी अजीब बात है। मां के गर्भ-धारण की कई वजहें हो सकती हैं।

मां-बाप या दूसरे बड़े लोगों ने शायद एक बच्चा चाहा था-अपने ही सुख की इच्छा से या वंशरक्षा के संस्कार की वजह से। ऐसा भी हो सकता है कि जानबूझकर उन्होंने कुछ न चाहा हो, जन्म हुआ है प्राकृतिक नियमों से। जो भी हुआ हो, जन्म देकर संतान पर कोई भी उपकार नहीं किया गया। उन्हें कृतज्ञ होना चाहिए-यह बात बार-बार कहकर लोगों के दिमागों में ठूंस दी गई है। इसके पीछे है एक अलिखित और अनकहा षड़यंत्र-जिससे मां-बाप की पीढ़ी, यहां तक कि बड़े भाई-बहनों की भी, संतान की पीढ़ी पर हुकूमत बनाए रखे।

और अगर मान भी लिया जाए कि मां-बाप द्वारा

जन्मदान और अ दान का ऋण चुकाना संतान का कर्त्तव्य है तो इसका भी कोई हिसाब होना चाहिए।

अनपढ़ गरीब लोगों में बेटे-बेटियों को दस-बारह की उम्र से अधिक आर्थिक सहयोग नहीं दिया जाता। उसी उम्र से बेटे पैसा कमाकर परिवार की सहायता करना शुरू करते हैं और लड़कियों की तो उसी उम्र में शादी कर दी जाती है। बहुत उच्चशिक्षित मध्यमवर्ग परिवार में संतान शायद बीस -बाईस या बहुत अधिक हो तो पच्चीस वर्ष की उम्र तक मां-बाप पर अर्थिक रूप से निर्भर होते हैं। इस ऋण का हिसाब मां-बाप के अनुसार यह होता है कि जब तक उनकी मौत न हो, तब तक बच्चे उनके गुलाम होकर रहेंगे और आवश्यक हो तो मां-बाप का आर्थिक भार भी अपने कंधों पर लेंगे।

जीवन के पहले बीस सालों का कर्जा चुकाने के लिए बाद के चालीस सालों तक मां-बाप की हुकूमत मान कर गुलाम बन जीते रहना हमारे देश में कोई अनहोनी नहीं है। समाज में रहना हो तो स्वाभाविक है कि इंसान स्वभावतः एक दूसरे के साथ कई प्रकार से सहयोग करता है। स्वाभाविक रूप से रिश्तेदारों या दोस्तों में एक दूसरे की सहायता करने की प्रवृत्ति अधिक होती है। जिसके साथ परिचय अधिक हो, जिसके साथ प्यार हो, उसके लिए इंसान अधिक महसूस करता है, जरूरत हो तो सहायता करना है - जिम्मेवारी के एहसास से नहीं, बल्कि स्वाभाविक स्वतः स्फूर्त मानवता की अनुभूति से।
आजीवन संबंध होने से मां-बाप व बच्चों में प्यार व अन्य भावुकतापूर्ण संबंध अपने-आप बन जाते हैं। इस स्वाभाविक संबंध को जताने के लिए बच्चे मां-बाप के लिए कुछ न करें - ऐसी अजीब बात हम नहीं कर रहे। चूंकि हम मां-बाप हैं, इसलिए हमारी बात माननी होगी - इस हुकूमत की बात हम यहां कर रहे हैं।

बड़ों की इस हुकूमत की वजह से जो हुआ है, वह है हमारे देश के अधिकांश लोगों का व्यक्तित्व टुकड़ों में टूट चुका है। सभी को बड़ों का सामना करना पड़ा है, सब को बचपन और युवावस्था में मां-बाप के आदेशों को मानने को बाध्य होना पड़ा है। सारी ज़िंदगी उनके आदेश-निर्देश-प्रभावों को कमोबेश मानना पड़ा है।

इस तरह गुलामी मान लेने पर व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास नहीं हो सकता। इसी वजह से हमारे देश में स्वनिर्भर, पूर्ण रूप से विकसित व्यक्तित्व के लोग बहुत कम हैं। पर हम लोगों ने इस प्रसंग को केवल खंडित-व्यक्तित्व की चर्चा करने के लिए ही नहीं उठाया है।

हम लोग एक और अधिक व्यापक सामाजिक समस्या की चर्चा करना चाहते हैं। यह समस्या प्रगति की समस्या है, समाज की अग्रगति की समस्या है। सामाजिक तरक्की के साथ मां-बाप और बच्चों का संबंध घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ है, हालांकि आमतौर से हम लोग इस तरह सोचते नहीं। एक सूत्र बतलाया जा सकता है मां-बाप की हुकूमत मानने से इंकार न करें, तो समाज में तरक्की हो ही नहीं सकती। शायद यह बात सुनने में अच्छी नहीं लगती। थोड़ा गौर करें तो पाएंगे कि ज़रा भी अतिशयोक्ति इसमें नहीं है। सच तो यह है कि यह बात नई लग सकती है, पर है बड़ी मामूली। तरक्की कहते किसे हैं - किसी युग में इंसान की चिंतन-पद्धति व आचरण, समाज व्यवस्था, राष्ट्र व्यवस्था इत्यादि में अगर ऐसे परिवर्तन हों - जिसे इतिहास में उन्नति माना गया है, इसे कहते हैं तरक्की। समाज व राष्ट्र व्यवस्था में परिवर्तन के पीछे है मनुष्य के वैचारिक जगत में बदलाव।

वैचारिक बदलाव अगर न आए तो ऊपर बतलाए गए परिवर्तन संभव नहीं हैं। पर विचार या आचरण हवा

में नहीं पनपते। इंसान ही विचारों को बढ़ाता है। इंसान ही आचरण करता है। एक इंसान के जीवन में कथनी और करनी में फ़र्क जरूर हो सकता है। पर इतिहास में जो बड़े बदलाव आए हैं, वे और कुछ नहीं, विभिन्न पीढ़ियों में कथनी व करनी के बदलाव के ही संगठित स्वरूप हैं।

एक पीढ़ी जिस तरह सोचती है और आचरण करती है, उसकी अपेक्षा अगली पीढ़ी दूसरे ढंग से सोच रही है, यही होते हैं प्रगति के एक एक कदम। पिता और बच्चों की पीढ़ी में अगर कोई फर्क नहीं दीखता तो कहना पड़ेगा कि इन दोनों पीढ़ियों के बीच कोई सामाजिक प्रगति नहीं हुई।

अब हमारी बात स्पष्ट हो सकती है। पीढ़ियां एक जैसी सोचती या काम करती नहीं। सोचना और जीना इंसानों का काम है। एक पीढ़ी कथनी और करनी में पिछली पीढ़ी से अलग हो, तो इसका अर्थ है कि नई पीढ़ी में आने वाले अधिकांश लोग अपनी कथनी और करनी में अपने मां-बाप से अलग हैं। अर्थात् बेटे-बेटियों ने मां-बाप के दिखलाए रास्ते पर न चलकर नया रास्ता ढूंढ़ लिया है। अक्सर मां-बाप बेटे-बेटियों का नए रास्ते पर चलना उचित नहीं समझते। मां-बाप व बड़ों को खुश रखने के लिए जो संताने मां-बाप की हुकूमत मानने को बाध्य रह जाती हैं, उनका सामाजिक प्रगति में कोई योगदान नहीं होता। योगदान जिनका होता है, उन्हें मां-बाप के खिलाफ होना पड़ता है। कई बार ऐसे लोगों को कहा जाता है, बाप को पीटा, मां को भगाया सचमुच ऐसे बेटी-बेटों को कई दफा संपत्ति से वंचित कर दिया जाता है। समाज से बाहर कर दिया जाता है।

पिछली सदी में जो लड़कियां पढ़ाई-लिखाई के लिए स्कूल गई थीं, उन्हें अनेकों बाधाओं का सामना करना पड़ा था, निंदा सहनी पड़ी थी। जिन पुरुषों ने रूढ़ियों को त्यागकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को आगे बढ़ाया, उनमें से कइयों का मां-बाप ने त्याग किया। आज़ादी की लड़ाई ही हो, या स्वाधीनता के बाद के अनेकों इंकलाबी संघर्ष; इतिहास में ऐसा उदाहरण कोई भी नहीं है, जब मां-बाप ने बेटे-बेटियों से कहा हो, जाओ बच्चे, कानून की अवज्ञा करो, विद्रोह करो, जेल जाओ, गोलियां सह लो। मां-बाप ने कहा, घर की औलाद घर में रहो, दाल-चावल खाओ, ऊपर वालों को खुश रखो और नौकरी में पदो ति की कोशिश करो।

मां-बाप के इस उपदेश की अवहेलना न करने पर अग्नि युग की क्रांति (खुदीराम से अरोबिंदो तक), गांधी का असहयोग आंदोलन, तेभागा आंदोलन, नक्सलवादी संघर्ष, इनमें से कोई भी नहीं हुआ होता। गोर्की के मां उपन्यास की मां जैसे चरित्र अपवाद-स्वरूप मिलते हैं, यह हम मानते हैं, पर अपवाद तो अपवाद ही हैं।

ऊपर जिन बातों को हमने कहा है, इसी को और भी प्रखर रूप से एक फ्रांसीसी लेखक ने इस वाक्य में कहा है, "दोगले बच्चे ही भविष्यद्रष्टा होते हैं।" पाठकों को यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस वाक्य में अलंकार रूप दोगले शब्द का शाब्दिक अर्थ लिया जाए तो वह गलत होगा। दोगले बच्चों की कथनी या करनी को श्रृखंला में बांधने के लिए समाज द्वारा स्वीकृत कोई बाप नहीं होता। इसीलिए केवल दोगली संताने ही पिछली पीढ़ियों के गलाघोंटू प्रभाव से पूर्णतः मुक्त हो सकती हैं।

(बांग्ला से अनुवाद — लाल्टू)

विज्ञान क्या है ?

पिछले साल 14 नवम्बर को माध्यमिक शाला के एक शिक्षक अपने स्कूल में हो रहे कार्यक्रम के लिए 'विज्ञान क्या है'? पोस्टर प्रदर्शनी एकलव्य के होशंगाबाद केन्द्र से ले गए। कुछ दिनों बाद उन्होंने उस प्रदर्शनी पर 150-200 विद्यार्थीयों की प्रतिक्रियाओं का एक पुलिंदा आकर हमें पकड़ा दिया।

बाद में उन रचनाओं पर एक नज़र डालने पर पाया कि वे सब टिप्पणियां आमतौर पर एक पोस्टर प्रर्दशनी पर अपेक्षित टिप्पणियों से बहुत ही अलग थी। हमें ऐसा लगा कि ज़रूर किसी ख़ास तरीके से उस शाला में इसे दिखाया गया होगा जिससे इस तरह की टिप्पणियां आई। इस लिए हमने उन शिक्षक से प्रर्दशनी दिखाने के उनके तरीके के बारे में संक्षेप में लिख देने को कहा।

उनका तरीका और कुछ विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाएं अगले कुछ पन्नों में दी गई हैं। जहां तक संभव हो सके विद्यार्थियों की टिप्पणियों को जैसा का तैसा ही रहने दिया गया है।

एकलव्य द्वारा संचालित विज्ञान प्रदर्शनी का प्रयोग विज्ञान जत्थे के बाद विज्ञान प्रदर्शनी के रूप में सामान्य नागरिकों के बीच तथा शासकीय विद्यालय में हुआ। उस समय का मेरा निजी अनुभव यह रहा कि दर्शक जत्थों में आते हैं और प्रदर्शनी का दर्शन मात्र करते हैं। उनमें प्रदर्शनी से सूझबूझ के साथ जुड़ने की मानसिकता का अभाव ही महसूस हुआ। बड़ी लगन व मेहनत के साथ तैयार इस प्रदर्शनी का और कोई बेहतर उपयोग हो सकता है? इस विचार का उत्तर मेरे दिमाग में यह आया कि कक्षा में आठवीं- नवमीं के छात्र-छात्राओं को क्यों न क्रमश एक-एक चित्र प्रदर्शित कर उसमें ही लिखा हुआ तथा दिया चित्र उनमें क्या विचार, प्रेरणा, अवधारणा देता है यह देखा जाए। तथा कुल प्रदर्शनी के बाद 1. क्या देखा 2. क्या समझा? 3. क्या होना चाहिए?

इन बिन्दुओं पर प्रदर्शनी देखते समय तथा प्रदर्शनी देखने के 5 मिनट बाद तक छात्र अपनी अभिव्यक्ति प्रगट करें। इस हेतु शासकीय माध्यामिक शाला की कक्षा आठवीं के लगभग 150 छात्र-छात्राओं को, कक्षा नवमीं के 150 के लगभग छात्र छात्राओं को तथा ग्रामीण क्षेत्र, हरिजन कन्या आश्रम की छटवीं से आठवीं तक पढ़ रही करीब 60 छात्राओं को कक्षा में विज्ञान प्रदर्शनी दिखाई। यह भी जांचने की कोशिश की कि चित्र प्रदर्शन व प्रदर्शनी के चित्र में लिखित विचार पठन द्वारा छात्रों में क्या अवधारणा बनती है?

यह बात उन्हें चर्चा में पूर्व ही बता दी गई कि शब्दों तथा विचारों को संपूर्ण रूप से चित्रित नहीं किया जा सकता। चित्र सोचने की एक शुरूआत हो सकता है, इसके अलावा भी दर्शक की अपनी समझ, अपने उदाहरण एवं अपने निजी विचार हो सकते हैं जिन्हें बेझिझक लिखने को स्वतंत्र हैं। साथ ही प्रदर्शनी को लेकर आगे भी चर्चा मनन चिंतन जारी रखा जा सके तो ज्यादा महत्वपूर्ण होगा।

प्रदर्शनी देखते समय छात्रों में जिज्ञासा का भाव उजागर हुआ। प्रदर्शनी के चित्रों के साथ प्रत्येक चित्र के लिए कुछ विचार तत्व 10-12 पंक्ति में शिक्षक को उपलब्ध हों तो यह 'विज्ञान क्या है' प्रदर्शनी के रूप में कक्षा में गतिशील प्रदर्शनी बनकर विज्ञान की चेतना को और गहरे में उतारने में सार्थक सिद्ध हो सकती है।

राम नारायण शर्मा
शासकीय माध्यमिक शाला
एस.पी.एम होशंगाबाद

या...विज्ञान सोचने का एक तरीका है?

1

हमने देखा की विज्ञान एक समस्या है और समस्या का समाधान ही समझा। हमने देखा की समस्या का निराकरण जब ही होगा जबकि हम उसके बारे में सोचें, खोज करें और खोजकर समस्या का हल ढूढे और समस्या नाम को ही समाप्त कर दें। हमने देखा की यदि हम कुछ करने की सोचें तो हम उसे पूर्ण कर सकते हैं।

हम इससे समझते हैं कि हमें भी इन बातों पर ध्यान देना चाहिए और हम बड़े बोझ को भी आसानी से कम कर सकते हैं। यदि हम खुद प्रयोग और खोज करें तो किताबी ज्ञान का बोझ कम कर सकते हैं। और इससे विज्ञान में बढ़ती हुई समस्या से लड़ने और उनसे निपटा जा सकता है।

वास्तव में विज्ञान के विषय में सोचना वैज्ञानिकों का ही काम नहीं है। विज्ञान के विषय में सभी को सोचना और समझना चाहिए। तभी हम कुछ कर सकेंगे और केवल आकाश में तारे, चन्द्रमा, सूर्य, वायुमण्डल आदि ही विज्ञान नहीं। विज्ञान पृथ्वी पर अनेकों ऐसी चीजें हैं जिन पर हम खोज सकते हैं। और उनको करना चाहिए।

- महेन्द्र कुमार तिवारी
कक्षा - दस

2

मैंने क्या देखा? बढ़ता हुआ ज्ञान -- आज कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां विज्ञान न हो। मनुष्य सभ्यता के प्रारंभिक युग से ही प्रकृति पर अधिकार पाने के लिए प्रयत्नशील रहा है और उसके प्रयत्नों का ही परिणाम है कि आज विज्ञान अपने चमत्कारों से, अद्‌भूत अविष्कारों से सबको आश्चर्यचकित किए हुए है। विज्ञान ने प्रकृति की दुरूहता, अगभ्यता, अदृश्यता सबको दूर कर दिया है। विज्ञान के प्रताप से दूर के स्थान भी निकट हो गए हैं। आज विज्ञान हमारे जीवन की रग-रग में इतना व्यापत हो गया है कि उसके बिना हम अपने को पंगु-सा निरीह और असहाय पाते हैं।

क्या होना चाहिए? हम सब को मिलकर, एक हो कर विज्ञान का अविष्कार करना चाहिए। तभी हमारा विज्ञान उन्नति कर पाएगा। यदि हमारे वैज्ञानिक अपने दृष्टिकोण को रचनात्मक बना लें तो विज्ञान की सहायता से वे धरती को स्वर्ग बना लेंगे।

मेरी क्या समझ बनी यदि विश्व के वैज्ञानिक विंध्वसात्मक अविष्कारों की प्रवृत्ति को त्याग कर मानवीय कल्याणों के प्रति उन्मुख हो जायें तो शाति का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा। सर्वत्र प्रेम और सद्‌भावना व्यक्त हो जायेगी और यह पृथ्वी स्वर्ग बन जायेगी।

-विमलेश साहू
कक्षा आठ

3

मैंने विज्ञान प्रदर्शनी देखी। उसमें पाया की हमारी शिक्षा प्रणाली में बहुत दोष हैं। हमें सिर्फ किताब में लिखे प्रयोग समझा दिये जाते हैं। व सर के द्वारा करा दिये जाते हैं। इससे छात्रों को ठीक समझ नहीं आता। उनका ज्ञान नहीं बढ़ता। इस शिक्षा का

जिज्ञासा

कोई फायदा नहीं है सिर्फ डिग्रियां हासिल हो जाती हैं। यह कहा जाता है कि छात्रों को अधिक प्रश्न पूछने चाहिए परन्तु ऐसा होता नहीं है।

हमारी कथनी और करनी में बहुत अन्तर है। हमें इस अंतर को खत्म करना है। इस दिशा में एक ठोस कदम होशंगाबाद विज्ञान के द्वारा उठाया गया है। इसमें प्रयोग के द्वारा जोड़ने का प्रयत्न किया गया है। फिर भी इस बात में अनेक कठिनाईयां आ रही हैं। ये कठिनाईयां बहुत थोड़ी नहीं हैं।

अधिकांश शिक्षकों की इस विज्ञान में रूचि नहीं है। होशंगाबाद विज्ञान का कहना है कि जो छात्र खुद करके देखेगा वही समझेगा। शिक्षा के इस नये रास्ते में समस्या कितनी भी गंभीर व बड़ी क्यों न हो लेकिन सभी लोगों को मिलकर करने से यह समस्या हल हो जायेगी। अतः हमें अंत तक समस्याओं को हल करने व शिक्षा प्रणाली को आगे बढ़ाने में जुटे रहना चाहिए।

-अलोक कुमार चौरे
कक्षा दस

4

सिर्फ क्या होना चाहिए दुनिया में अगर कोई रोग है तो उसका इलाज भी उपस्थित है। बस, उस इलाज को ढूंढने वाला चाहिए। दुनिया में सारे कार्य इंसान ने ही किए हैं। स्कूली समस्याओं को किताबों में लिख देना ही सब कुछ नहीं होता है । जिस तरह लिखा गया कि शिक्षक छात्र का हमदर्द, दोस्त, एक मार्गदर्शक होना चाहिए लेकिन इसको लिखने से कुछ नहीं होगा। इन बातों को क्रियान्वित करना चाहिए।

समस्या अगर बड़ी है तो उसके पहले छोटे-छोटे हिस्से करना चाहिए। फिर उन समस्याओं का समाधान करना चाहिए।

जिस तरह एक व्यक्ति की कीमती वस्तु एक बड़े से पत्थर के नीचे गिर जाती है। जिसे वह निकाल नहीं पा रहा है। लेकिन उस व्यक्ति ने कुछ सोचा और घर जाकर हथोड़ा लाकर उस पत्थर को फोड़ दिया जिससे उस पत्थर के टुकड़े-टुकड़े हो गए और उसने उन टुकड़ों को बारी-बारी से उठाकर फैंक दिया और अपनी वस्तु निकाल ली।

समय भले ही ज्यादा लगे लेकिन समस्या हल होती अवश्य है। इंसान कुछ भी कर सकता है बस उसे अच्छा मार्गदर्शक चाहिए। किसी भी चीज को देखना, समझना, और करना चाहिए।

-सोमनारायण
कक्षा नवीं

5

विज्ञान से हमारे देश में शिक्षा का प्रसार हुआ है। चिड़ियों को करन्ट इसलिए नहीं लगता है क्योंकि वह बिजली के एक तार पर बैठती हैं। अगर वह दोनों तारों पर बैठे तो उसे भी करन्ट लग सकता है। यह विज्ञान के कारण है।

-विजय सिंह राजपूत
कक्षा नवीं

कल्पना

6

क्या देखा आजकल हमने विज्ञान के बढ़ते चरण देखे जैसे - चन्द्रमा पर पहुंचना और भी ग्रह व उपग्रह पर पहुंचना। विज्ञान ने कई ऐसी चीज़ बनाई जैसे हवाई जहाज जिससे कई महीने की यात्रा कई दिनों की हो गई है। विज्ञान ने एक ऐसी बन्दूक बनाई है जो कि एक मिनिट में तीन हजार गोली छोड़ती है। आज हम विज्ञान के कारण दूर देश से अपने ही घर बैठ कर बात कर सकते हैं।

विज्ञान ने एक तरफ हमारा जीवन सफल कर दिया और दूसरी तरफ कठिन भी कर दिया है। जैसे कि विज्ञान ने कई बीमारियों की खोज की और उनके बदले में हमें नई बीमारी दे दी जैसे टी.वी. केन्सर, हार्ट-अटैक आदि। बीमारी हमें दे दी हैं।

क्या समझा हमने समझा कि विज्ञान में अधिकांश लोगों की रूचि होना चाहिए ओर अवलोकन करना चाहिए। खोज करना चाहिए। इसके लिए जिज्ञासा होनी चाहिए और प्रयोग करना चाहिए और हमें विज्ञान के सिद्दांत को समझना चाहिए। विज्ञान ने कई नई खोजे की हैं और कई नई समस्याएं दी हैं।
क्या होना चाहिए हमें विज्ञान का प्रयोग करके उस का फिर अवलोकन करना चाहिए और निष्कर्ष।

-अखिलेश सिंह राजपूत
कक्षा नवीं

7

क्या समझा मैंने समझा कि जब मैंने उसे देखा की शिक्षक पढ़ते हैं ओर लड़के इधर-उधर देखते रहते हैं। उस पर विचार नहीं करते बल्कि उसे कापी पर लिख लेते हैं और परीक्षा आने पर किताबें खोल कर उत्तर लिखते हैं। तो फिर याद करने का कोई मतलब नहीं क्योंकि हर विद्यार्थी नकल से पास हो जाता है। परन्तु इमानदारी से पेपर देते और वो पास होता तो वह खुश होता।

क्या होना चाहिए शिक्षक जो पढ़ाता है उसे समझना चाहिए और उस पर अम्ल करना चाहिए। जो गुरूजी ने पढ़ाया कुछ समझ में आया या नहीं। अगर वह समझ में आया हो तो उस पर प्रयोग करना चाहिए।

लेखक के द्वारा जो गाईड निकाली जाती हैं बालक उससे ही पढ़कर पास होते हैं बल्कि शिक्षक ने क्या समझाया उस पर अम्ल नहीं करते और हमें ये नहीं होने देना चाहिए क्योंकि अंधेरे में उजाला करने के लिए हमें निम्न पर अम्ल करना पड़ेगा --

मैंने सुना भूल गया, मैंने देखा याद रहा,
करके देखा समझ गया।
इससे स्पष्ट होता है कि हमें उसे समझना चाहिए

-गौरी शंकर वाजपेयी
कक्षा दस.

8

क्या होना चाहिए?
विज्ञान ने बहुत उन्नति की है। विज्ञान ने उतनी प्रगति की है कि बटन दबाते ही काया पलट जाती है। विज्ञान से कम्पयूटर, केल्कूलेटर आदि और भी जो आम काम में लाए जाते हैं। ये नहीं होना चाहिए। उससे हमारे देश में जहां दस लोगों को रोजगार मिलता था। वहां एक आदमी ही उसे हल

परिकल्पना

कर सकता है। और जहां स्कूल आदि नहीं।पेड़ के नीचे बैठकार पढ़ाते हैं। यह नहीं होना चाहिए उनके लिए एक व्यवस्थित स्कूल होना चाहिए। और भी समस्याएं हैं जो विज्ञान द्वारा पूर्ण नहीं की जा सकती।

-संतोष कुमार
कक्षा दस

9

क्या देखा, क्या समझा, क्या होना चाहिए हमने विज्ञान संबंधित चित्र देखे जिसमें हमने बच्चों में जागृति, जिज्ञासा, रूचि उनकी कल्पना और कथनी और करनी के बीच की खाई को समझा तथा उन खाईयों को भरने का प्रयास कैसे किया यह देखा। हमने उन समस्याओं का समाधान कैसे किया यह देखा और बालक के मन के विचारों को देखा। शिक्षकों को बच्चों को वैज्ञानिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

-कुमारी व्यास
कक्षा दस

10

क्या देखा हमने उन कागज में बने हुए काल्पनिक चित्र को देखा जिसमें समाज, शिक्षा आदि का कुछ अंश था।

-रजनीश
कक्षा दस

11

मैने कुछ विज्ञान के चित्र देखे। मैंने सोचा कि ये कुछ सही व कुछ गलत हैं। जैसे जो सही बात है वो स्पष्ट नहीं हो रही है जैसे पढ़ाई को विज्ञान के तरीके से करें तो ज्यादा अच्छी पढ़ाई हो सकती और छात्र खुद प्रयोग करके देखें। आजकल पढ़ाई पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है।

हर छात्र को कक्षा में बोलने का अधिकार ज्यादा से ज्यादा होना चाहिए जिससे वह अपनी बात को अच्छी तरह से स्पष्ट कर सके। पुस्तक देख के करने वाली परीक्षा एक तरह से ठीक है क्योकि उसमें हर छात्र सोच कर ही लिखता है। छात्र जितना सोचता उतनी ही सोचने की शक्ति बढ़ती है जिससे वो नये आविष्कार करना चाहेगा। और वो सफलता भी पायेगा।

-उमेश कुमार यादव
कक्षा दस

12

विज्ञान सोचने समझने का एक माध्यम है। यही समाज और मनुष्य की उन्नति का मूलभूत है। विज्ञान मनुष्य की सोचने समझने की शक्ति को विकसित करता है। हमने यहां विज्ञान से संबंधित चित्र देखे। विज्ञान वास्तव में मनुष्य की चिन्तन शक्ति को तीव्र करने का एक सशक्त माध्यम है। विज्ञान को आधुनिक शिक्षा पद्धति का आधार होना चाहिए। विज्ञान शिक्षा का अभिन्न अंग है। विज्ञान मानव जीवन की उन्नति करके जीवन को विकासशील बनाता है। मनुष्य की दिनचर्या में विज्ञान का उपयोग होना चाहिए। विज्ञान रटने की चीज नहीं है वह देखने और समझने की चीज है। विज्ञान एक अद्‌भूत चीज है।

-रशाना वानखड़े
कक्षा दस

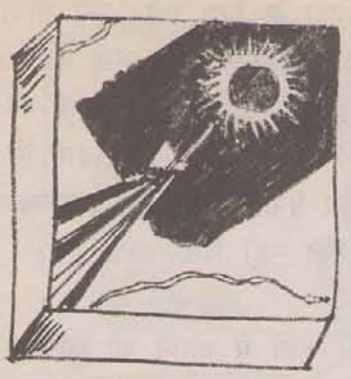

प्रमाण

13

हमारी क्या समझ बनी-- नहीं, सभी जगह अंधेरा नहीं है। अधिकतर ज्ञान का प्रकाश भी हो रहा है। शिक्षक को योजनाओं में बच्चों का हाथ बटाना चाहिए।

-नीतिका पटेल
कक्षा आठ

14

विज्ञान सोचने, समझने और जानने का एक माध्यम है। यही मनुष्य और समाज की उन्नति का मूलभूत आधार है। विज्ञान ही मनुष्य की सोचने, समझने की शक्ति को विकसित करता है। यहां हमने विज्ञान से संबंधित नये-नये चित्र, विज्ञान को अच्छी तरह से समझने की विभिन्न-विधियों को ध्यान पूर्वक देखकर उनका अध्ययन किया।

विज्ञान वास्तव में मनुष्य की चिन्तन शक्ति को तीव्र करने का सशक्त माध्यम है। विज्ञान को आधुनिक शिक्षा पद्धति का आधार होना चाहिए। विज्ञान शिक्षा का अभिन्न अंग है। विज्ञान मानव जीवन की उन्नति करके उसके जीवन को विकासशील बनाता है। मनुष्य के दैनिक जीवन में विज्ञान का उपयोग होना चाहिए।

विज्ञान रटने की वस्तु नहीं है जिसे रटकर समझा जा सके। इसे समझने के लिए प्रयोग करना, प्रमाण खोजना महत्वपूर्ण है। विज्ञान ही शिक्षा का प्रमुख माध्यम होना चाहिए। यदि हम इसे सोचने का तरीका मान लें तो हम इसे अच्छी तरह समझ सकते हैं और कुछ प्राप्त भी कर सकते हैं। विज्ञान ही मनुष्य की विचार शक्ति को अत्याधुनिक बना सकता है।

-कुमारी वर्षा दुबे
कक्षा दस

15

क्या देखा? क्या समझा? क्या होना चाहिए? हमने देखा कि विज्ञान क्या है। क्या यही विज्ञान है। आखिर क्या यही विज्ञान है।

हमने देखा कि उसमें कुछ उपकरण-हवाई जहाज, मशीनें व वैज्ञानिक तरीके। क्या विज्ञान सोचने का तरीका है। हां विज्ञान को हम सोचकर, समझकर ही करते हैं। जब हम कोई उपकरण बनाते हैं तो हमें उसे पूरा करने की जिज्ञासा रहती है, रूचि रहती है। विज्ञान में जब हम कोई प्रयोग करते हैं तो हम पहले प्रयोग करके देखते हैं फिर अवलोकन करके देखते हैं व आखिर में निष्कर्ष निकालते हैं।

हमने कुछ समय पहले बहुत से चित्र देखे व उनसे हमने यह समझा कि विज्ञान क्या है। विज्ञान को हम सोचने, विचार करने व बहुत समझने के बाद ही कोई प्रयोग करते हैं। हम विज्ञान का जब प्रयोग करते हैं तो हम बहुत सी वस्तुओं कि खोजबीन करके करते हैं। हम जब प्रयोग करते हैं तो कल्पना करते हैं कि यह ऐसा बनाना है, यह वैसा बनाना है। साथ ही बनाने के पहले तर्क-वितर्क करते हैं। प्रयोग करके देखते हैं। आंकड़े बनाते हैं।

हमें चिन्ता भी हो जाती है यदि कभी कुछ गलत हो जाए तो हम इसे पूरा कैसे करेंगे। ऐसा कहा जाता है कि शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन होना चाहिए। तो यह होना चाहिए। ऐसा भी कहा जाता

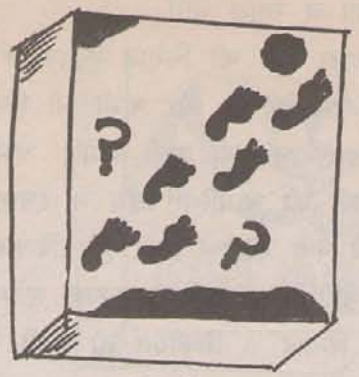

नई खोजें

है कि बच्चों को प्रयोग करके सीखना चाहिए, देखना चाहिए तो अक्सर स्कूलों में ऐसा होता है कि सर व मेड़म खुद प्रयोग करते हैं। हमें विज्ञान को मजाक नहीं समझना चाहिए।
एवं बच्चों से प्रयोग नहीं करवाते हैं।

-ज्योति साहू
कक्षा दस

16

प्र.1 मैंने क्या देखा?
मैंने क्या समझा?
क्या होना चाहिए?

मैंने तर्क की तस्वीर देखी।
मैंने तर्क की तस्वीर को समझा।
हमें तर्क होना चाहिए।
कल्पना
मैंने कल्पना करी
मैंने कल्पना को समझा
कल्पना पर प्रयत्न होना चाहिए।
जिज्ञासा
मैंने जिज्ञासा को देखा
मैंने जिज्ञासा को समझा
जिज्ञासा का चित्र बनाना चाहिए।
परिकल्पना
मैंने परिकल्पना को देखा
मैंने परिकल्पना को समझा
परिकल्पना होना चाहिए
सिद्धांत
मैंने सिद्धांत की तस्वीर को देखा
सिद्धांत को समझा
हमें सिद्धांतकारी होना चाहिए।
नई समस्या

मैंने समस्या को देखा, मैंने नई समस्या को समझा, हमें नई समस्या बढ़ता हुआ ज्ञान ट मैंने बढ़ता हुआ ज्ञान देखा, मैंने बढ़ता हुआ ज्ञान को समझा, हममें बढ़ता हुआ ज्ञान होना चाहिए।

17

हमने देखा
हमने देखा कि आज दुनिया पर बोझ बहुत है। आज तक दुनिया जिस ढंग से चल रही थी उसमें नवीकरण हो रहा है। विज्ञान के कारण बच्चों तथा बड़े-बड़े लोगों के मन में कई प्रकार के प्रश्न उठते हैं और वह उस पर सोचते हैं, विचार करते हैं और उन प्रश्नों के उत्तर ढूंढते हैं। सबसे बड़ा प्रश्न यह उठता है कि आखिर यह विज्ञान है क्या, क्या हवाई जहाज, बस, कम्प्यूटर, राकेट यही विज्ञान है।

हमने देखा विज्ञान में कई प्रयोग हैं जिसमें से कुछ छात्र खुद करते हैं, कुछ पुस्तक में से पढ़कर करते हैं तथा कुछ शिक्षक करवाते हैं। हमने देखा कि आदमी अकेला समस्या का सामना नहीं करता। कई लोग मिलकर उस समस्या के बारे में सोचते हैं तथा उस समस्या का हल ढूंढते हैं, विज्ञान को जब मनुष्य पहली बार पढ़ता है तो पहला प्रश्न उठता है विज्ञान क्या है?

हमने समझा
हमने समझा कि विज्ञान न राकेट है न हवाई जहाज है न कम्प्यूटर है। यह तो एक ऐसा अध्ययन है जिस पर सोचने से मनुष्य कई बातें सीखता है। जिससे मनुष्य की कल्पना शक्ति का

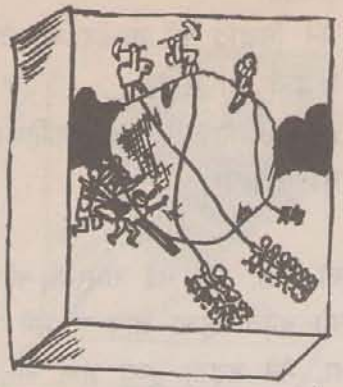

पर कुछ बदलाव तो होता ही है....

विकास जिससे उसमें जिज्ञासा, तर्क करने की शक्ति, कुछ करने की रूचि, खोजबीन करने की जिज्ञासा, चिन्तन शक्ति आदि चीजें मनुष्य में उत्पन्न होती है। विज्ञान समस्या का समाधान है।

होना चाहिए
हमें विज्ञान को समझना चाहिए। अध्यापकों को विज्ञान इस तरह पढ़ाना चाहिए, जिससे छात्रों को समझ में आए। यदि बच्चे प्रश्न करते हैं तो उन्हें रोकना नहीं चाहिए बल्कि उनके प्रश्नों के उत्तर पालकों, आम आदमियों व शिक्षकों को देना चाहिए।

- राखी
कक्षा दस

18

मैने क्या देखा मैंने यह देखा की शिक्षक बाहर गये तो बच्चे लोग कुर्सी पर बैठकर सर का मजाक व हंसी उड़ाते हैं। सर लोग अपने ध्यान में मगन रहते हैं और वह लोग ये नहीं देखते की बच्चे पढ़ रहे हैं कि मस्ती कर रहे हैं। कोई उल्टा बैठा हुआ, कोई झगड़ा कर रहा है और कई सर लोग बच्चे को परिभ्रमण पर ले जाकर अपनी अच्छी ज्ञान की बातें बताते हैं और उन्हें प्रयोग करवाते हैं। और उन्हें सिखाते भी हैं। मैंने ही देखा है और मुझे याद था यही।

मैने क्या समझा व समझ बनी
मेरे में यह समझ बनी की किताब पुस्तक को रद्दी की डलियो में रख देते हैं और कभी भी किताब को सही ढंग से इस्तेमाल नहीं करते क्योंकि अभी तक उन्होंने किताबों को व्यवस्थित ढंग से रखना सीखा ही नहीं तो वे कैसे रखेंगे। अगर हम किताब की इज्जत करेंगे तो वह भी हमारी इज्जत करेगी फिर तो कभी हमें किताब से शिकायत तो होगी नहीं।

तुम्हारे सोचने का ढंग कैसा होना चाहिए
हमारे सोचने का ढंग नारमल व ठंडे दिमाग से सोचना चाहिए। क्योकि अगर हम सही ढंग से नहीं सोचेंगे तो हमसे कुछ नहीं बनेगा और हमारे समझ में कुछ नहीं आएगा और फिर उसका उत्तर भी नहीं आएगा।

-अनिता मालवीय
कक्षा आठ

19

विज्ञान का महत्व कई चीज़ों में अधिक है जैसे फूल, प्रकाश, पेड़-पौधे, पृथ्वी की जानकारी, वैदिक युग का जीवन आदि चीजों में अधिक महत्व है।

फूल का परीक्षण
हम अगर किसी भी फूल के बारे में हम सोचते हैं तो गेंदा और गुलाब चमेली जैसे फूलों के चित्र उभर आते हैं। क्या आपने कभी सोचा हैं या सोचा था कि यहां फूल इतने आकर्षक क्यों और कैसे होते हैं। फूल के सभी पुकेसरों को मिलाकर पुमंग कहते हैं। और यहां पुमंगों से फूलों और फलों का बारीकी से अध्ययन करने के लिए आकर्षक आवश्यक है। हम तरह-तरह के फूल और फल इकट्ठे करें अत: अलग-अलग मौसम में परिभ्रमण करें। शायद आप इसे पढ़कर कुछ फूलों के बारे में समझेंगे।

प्रकाश का परीक्षण
आप शायद सोचेंगे की अंधेरे का मतलब क्या है? या प्रकाश से ही अंधेरे का मतलब समझेंगे। लेकिन

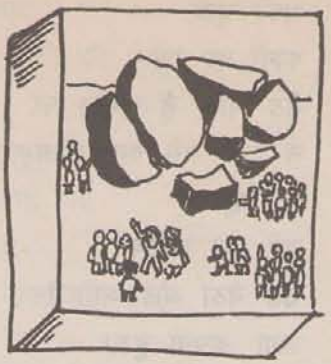

हां, कुछ बदलाव तो हो रहा है...

नहीं, इसे समझने के लिए थोड़ा दिमाग खर्च करना पड़ेगा। किसी भी चीज़ से हमारी आंखों तक प्रकाश नहीं आ रहा। किसी भी चीज़ को तब देख सकते हैं जब उससे हमारे आंखों तक प्रकाश आए। कोई भी झिरी जो एक छेद से निकल रही है। उसे हम प्रकाश की किरण कहते हैं। या प्रकाश कहते हैं?

वैदिक युग जीवन- मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खोज कई बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने की है। इसकी पूरी खोज कुल 100 वर्ष में खत्म हुई। भारतीय इतिहास में इस काल को वैदिक युग कहते हैं। पिछले 40 वर्षों में वैदिक युग के इतिहास के लिए पुरात्व विज्ञान के भी सबूत मिलें हैं। वैज्ञानिकों ने देखा कि इसी देश में कुरूक्षेत्र का मैदान है। कुरूक्षेत्र में पांडवों कौरवों का युद्ध हुआ था और ऐसी कई बातों का वैज्ञानिकों ने पता लगाया था।

पेड़-पौधे- हमारे देश में अनेक वन ऐसे हैं कि जिसमें अधिक लकड़ियां हैं। कई लोग इसे कटाकर बेच देते हैं लेकिन ऐसा नहीं करना चाहिए। वन हमारे लिए अधिक जरूरी हैं। पेड़-पौधे हमारे जीवन का और अंगों का एक हिस्सा हैं। इसलिए कोई इन्हें काटता है तो इन्हें मत कटने दो।
अब इस युग की वैज्ञानिक चीजें
आजकल वैज्ञानिकों ने कई वैज्ञानिक फैक्टरियों से अनेक चीजें बनाई हैं। आजकल कम्प्यूटर, रोबट जैसी मशीनें बन गई हैं जिससे कई ऐसी चीजें हैं जो कि हम इनके द्वारा काम करा सकते हैं।

हवा
हमारे जीवन के लिए हवा आवश्यक है। अगर हमें हवा नहीं मिले तो हम जी नहीं पाऐंगे। और विज्ञान को आप ऐसा वैसा विषय मत समझिये जो छात्र या छात्रायें इस विषय को समझ गये उनका जीवन सफल होगा। यहां अधिक याद करने योग्य नहीं है।

सिर्फ आप इसे समझें और समझदारी से इसका प्रयोग करें तो आपकी समझ में सब आ जायेगा। यहां अपने पे से तो नहीं कह रही लेकिन आप इसे समझें। मैं यही मानती हूं कि कई स्कूल ऐसे हैं जहां शिक्षक लोग बच्चों की रूचि की ओर ध्यान नहीं देते और अपनी मनमानी करते हैं। इसीलिए बच्चे इसे पढ़ने में अधिक रूचि लेते नहीं और कई शालाओं में तो प्रयोग करने के लिए समान भी नहीं रखते लेकिन उन लोगों से मेरी हाथ जोड़कर यह प्रार्थना है कि आप शालाओं में हर प्रयोग का चित्र रखें और फिर विज्ञान पढ़ाइये।

आपकी भी उसमें रूचि होगी और बच्चों को भी मदद मिलेगी और आप बच्चों को शिकायत या किसी और बातों पर चर्चा करने दीजिये। कृपा आप भी चर्चा करें। शायद कई मेरे भाई बहनों को मुझ से कई अधिक विज्ञान में रूचि होगी और उनकी रूचि शायद एक दिन उनकी जिन्दगी बन जाये। अपने देश में कई वैज्ञानिक यंत्र व वैज्ञानिक लोगों का जन्म हुआ है। और उन लोगों ने विज्ञान को जीवन दिया है।

मैं आपको एक पृथ्वी का चित्र बनाकर देती हूं आप इस चित्र को देखकर समझा सकते हैं। गलती के लिए माफी चाहते हैं।

- कु. रेखा यादव
कक्षा आठ

हरसूद

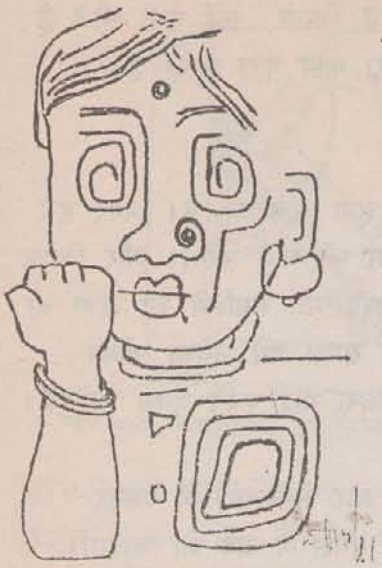

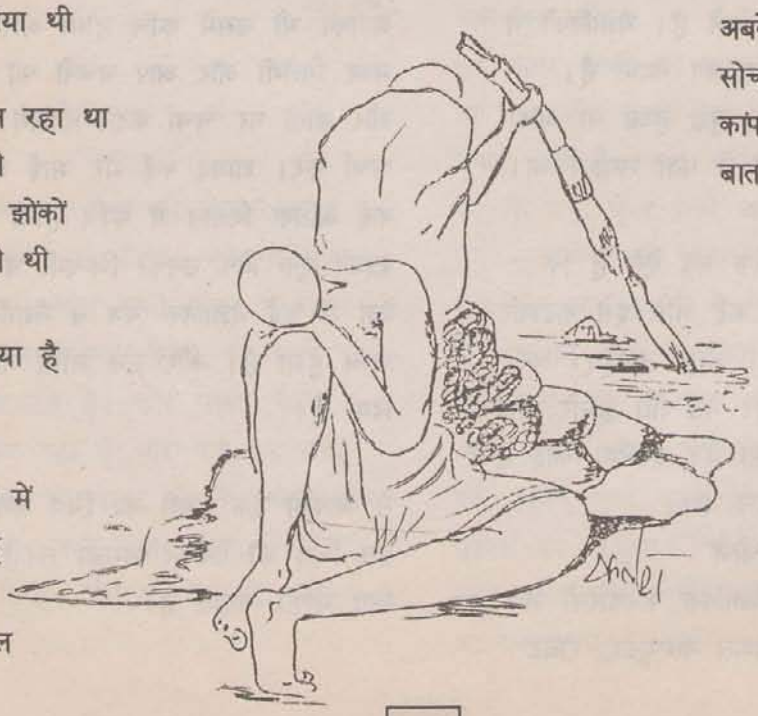

कविता की दुनिया से मैने
एक पांव निकालकर
तपती हुई धरती पर रखा
मेरी आंखें जल उठीं
बाहर सिर्फ कतारें थीं
कतारें ही कतारें
मैली पगड़ी
फटी बन्डी
सने हुये पांव
पसीने की गंध
यह मनुष्यों की दुनिया थी
जहां सब कुछ
दूध की तरह, उफन रहा था
एक गर्म दुनिया मेरी
कनपटियों से लू के झोंकों
की तरह टकरा रही थी

न जाने क्या हो गया है
हरखू को इन दिनों
गांव की सरहदों से
उठकर उसके कानों में
गूंजता है, बजता है
एक ही शब्द
बेदख़ल .... बेदख़ल

अपने हाथ
कानों पर रख
बैठ जाता है ज़मीन पर
न जाने उसे क्या होता
जा रहा है
गई रात चौंककर
उठ बैठा और अगोरने
लगा, अपना हुक्का
अपनी औरत
अपने बच्चे
अपना झोंपड़ा
अपनी टुकड़ा भर ज़मीन
सबको अपनी सूखी
छाती में छिपाने
के बाद ही उसकी आंख लग पाई

पांच बरस में
डूबता ही रहा है, हरखू
हर बार विकास आया
और हर बार हरखू की
पीठ पर अपनी मोंट के
नीले निशान छोड़ गया.
अबके तो सब डूब जायेगा
सोचता है हरखू बैचैनी से
कांप उठता है शहर जाने की
बात सोचकर
उसकी मासूम औरत
और बच्चे तो
कुछ भी नही जानते
विकास के बारे में
उन्हें तो बस ....
हरकू के साथ
अपनी धरती में
पसीना गिराना
अच्छा लगता है
अच्छा लगता है

उन्हें अपना संसार
गुड़ नमक और रोटी की तरह

कैसे छोड़ दे हरखू
अपनी मिट्टी, अपना घर
धरती और औरत
एक समान ही लगती है उसे

दोनों ही दूध और फल देने वाली
जब-जब औरत ने
उससे कोई गहना मांगा
हरखू ने अपने खेत की
भुरभुरी मिट्टी उसके
सिर पर डाल दी
और अपनी मिट्टी की
गंध से निहाल हो
उठे वे दोनों

खुली आंखों से
देख रहा है हरखू
भयावह स्वप्न
पानी! पानी! पानी!
हर ओर सिर्फ --- पानी
कहीं पता नहीं
ज़मीन, जंगल और
खेतों का
बह रहा है, उसका संसार
उसकी औरत
उसके बच्चे
उसका हुक्का
उसका झोंपड़ा
और उसकी ज़मीन
न जाने कहां होगी
समुद्र में
सब कुछ डूब गया
सब कुछ डूब रहा है

सिर्फ एक टोपी दिख रही है
जो विकास की है
प्रजातंत्र की है
आन-बान और शान से
लोगों के डूबते संसार पर
ठहाके लगा रही है।
बहुत दिनों में टूटा है
हरखू का दुःस्वप्न
हर तरफ से
उठता शोर
धीरे - धीरे
उसके कानों में
एक नारे की
शक्ल लेने लगा है
इन दिनों
हज़ारों, लाखों
मनुष्यों की

अपने डर को
पछाड़ कर
हरखू भी शामिल हो
गया है
नहीं डूबने देंगे लोग
अंधेरे में अपने संसार को
यह एक गर्म दुनिया थी

जो मेरी कनपटियों से
लू के झोंकों की तरह टकरा रही थी.

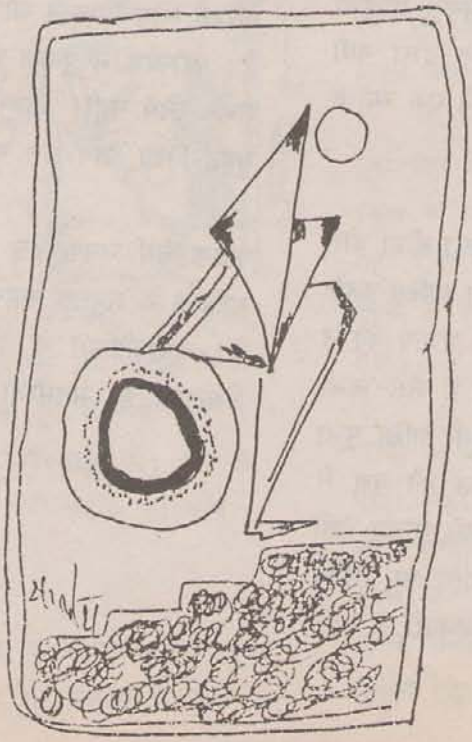

अखिल पगारे,
श्यामला हिल्स,
भोपाल (मध्यप्रदेश)

पुस्तक समीक्षा

खट्टर काका और अन्य कहानियां

हरिमोहन झा

प्रकाशक : राजकमल

प्रोफेसर हरिमोहन झा पटना विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र के प्रमुख अध्यक्ष हैं, मैथिली भाषा के साहित्य को विकास की ओर बढ़ाने वाले लेखक की 'खट्टर-काका' प्रसिद्ध व्यंग्य रचना है। धर्म, दर्शन, इतिहास एवं पुराण के अंधविश्वास एवं मान्यताओं के विरोधी प्रसंगों की मनोरंजक आलोचना 'खट्टर काका' में देखने को मिलती है। वे संस्कृत-साहित्य में काव्य विनोद रसधारा को इस रचना के द्वारा नयी सूझबूझ दे रहे हैं। इस पात्र के द्वारा उन्होंने एक व्यक्ति विशेष की अनूठी रूपरेखा बनायी है।

जो कुछ भी खट्टर काका हंसी-हंसी में उल्टा सीधा बोल जाते हैं उसे अपनी बातों के प्रवाह से सच्चा साबित करके ही छोड़ते हैं। शक्ति पूजा के आध्यात्मिक प्रभाव को न छूते हुए व्यावहारिक प्रभाव पर चोट करते हैं जैसे-'अजी शक्ति पूजा हम करते ही कहां हैं? असली शक्ति पूजा करते हैं वे देश, जो आकाश और पाताल को वश में किए हैं।' (उनका संकेत रूस, अमेरिका जैसे उन्नत देशों से है जिन्होंने अंतरिक्ष और सामुद्रिक शक्ति पर समान रूप से कब्जा किया है। रोज के नये अविष्कारों से राष्ट्र को समृद्धि प्रदान कर रहे हैं।)

हम लोग तो केवल स्वांग करते हैं, दैत्यों के पुतले जलाकर। लेकिन वास्तविक वीर मिट्टी के शेर से नहीं खेलते। नकली राक्षस को नहीं मारते।

दुनिया के जो मज़े हैं, हर्गिज़ कम न होंगे।
महफिल यही रहेगी, अफसोस हम न होंगे।

इस नज़रिये से रामायण, गीता, महाभारत, वेद-वेदान्त, पुराण सभी उलट जाते हैं। राम-कृष्ण, शिव, देवता ऋषि-मुनि के चरित्रों के गलत उपयोग से लड़ने का दायित्व भी खट्टर काका अपने ऊपर ले लेते हैं। तीव्र व्यंग्य का सहारा लेकर वे कट्टर पण्डितों को झुकने पर मजबूर कर देते हैं। जो ज्योतिषी अपनी स्वयं की जीवन रेखा नहीं देख सकता उसे छलित ज्योतिष और स्वार्थ पूरा करने का माध्यम बताते हैं। यहां इस 'खट्टर पुराण' का एक श्लोक भी सुन लें - (पण्डितों पर व्यंगोचित्)

मधुरेषु महाप्रिति श्रृंगाररस चिम्तनम्
परोपदेशे पाण्डित्यं पाण्डितस्य नमो गुणा

पण्डित लोग मिष्ठान और श्रृंगार रस के अधिक प्रेमी होते हैं। परोपदेश में कुशल होते हैं - कुछ पण्डितों के लिए, सबके लिये नहीं। शास्त्रों को गेंद की तरह उछालते हैं, मुहूर्त-विद्या, तंत्र-मंत्र को षड्यंत्र बतला देते हैं।

पाठक वर्ग उनके इस मधुर हास-परिहास को सामान्य साहित्य के अनुसार सहज सरल मन से स्वीकार कर सकते हैं। बुद्धिजीवियों के लिए सोचने की एक नयी दिशा दिखलाता है, मनमौजी 'खट्टर काका'।

तुलसीराम हर्णे
हरदा

खाल
बाल
छाल

हाथी जी की मोटी खाल,
भालू जी के लंबे बाल।
घोड़े जी की होती नाल,
ऊंट जी की नाजुक चाल।
बंदर जी के लाल गाल,
हिरण जी की सुंदर छाल।

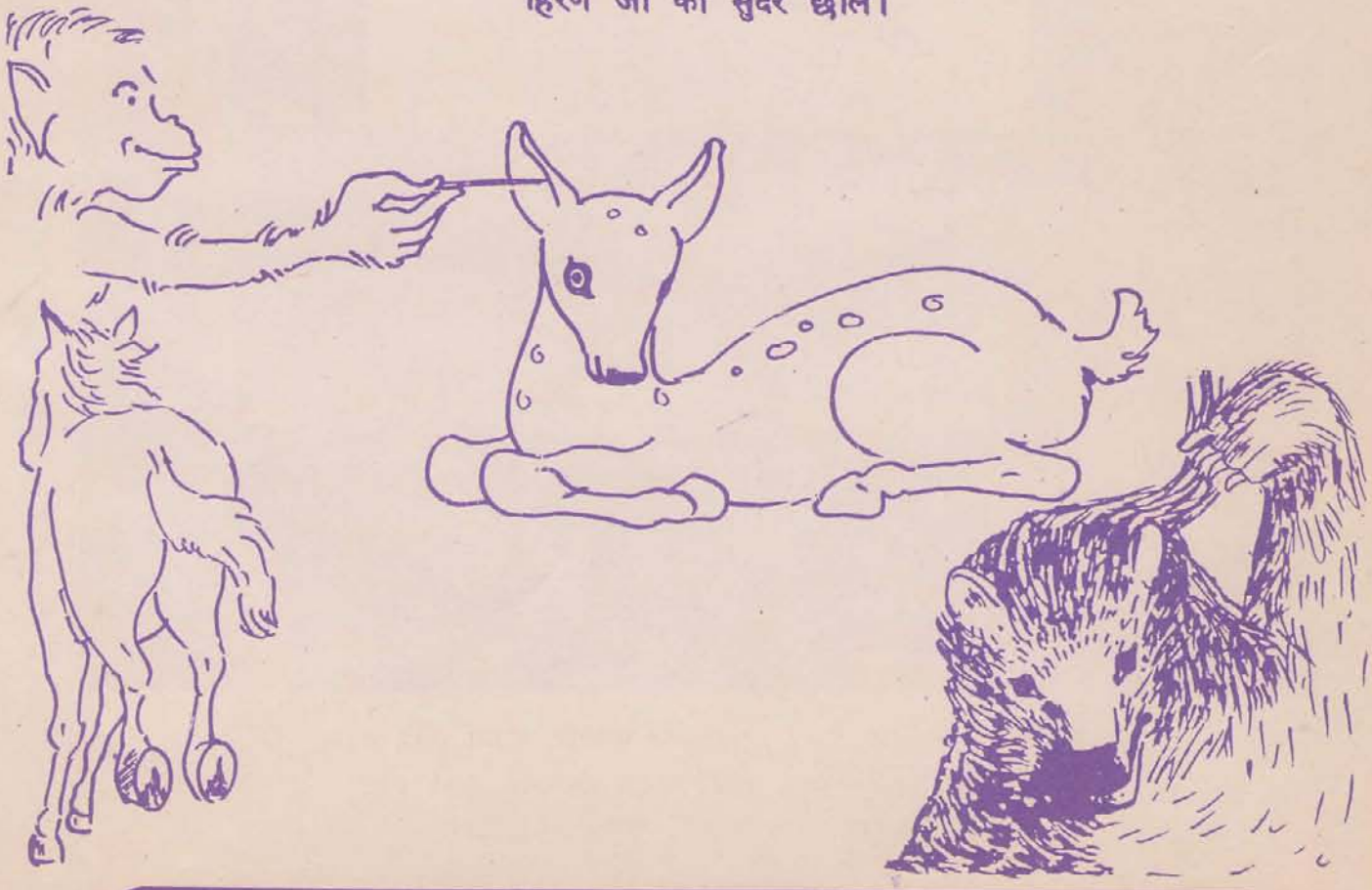

एकलव्य के प्राथमिक शिक्षा क्रार्यक्रम की तीसरी कक्षा की किताब से एक पेज

प्रकाशक : एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल 642 016
संपादन कार्यालय : एकलव्य, कोठी बाज़ार, होशंगाबाद 461 001
मुद्रण :भंडारी ऑफसेट, अरेरा कालोनी, भोपाल 642 016